अध्याय पाँचवा

"जैनेन्द्र के प्रारंभिक उपन्यासों में तथा साठोत्तरी उपन्यासों में चित्रित समस्याओं का तौलनिक अध्ययन"

अ] पारिवारिक समस्या ।

ब] सामाजिक समस्या ।

क] आर्थिक समस्या ।

ड] राजनीतिक समस्या ।

इ] समकालीन समस्या ।

अ] पारिवारिक समस्या :-

वर्तमान युग अति भौतिकवाद तथा राजनीती से ग्रस्त है, इसलिए आज का मानव अन्दर ही अन्दर, कहीं गहरे में परस्पर आतंकित है। उसकी आस्थाएँ चरमरा रही हैं। अनीश्वरवादी स्वर उग्र है तथा समग्र आस्था-मुलक नीतियों और परस्परओं के प्रति विद्रोह खडा किये हुए हैं। परस्पर अनभिज्ञ बने रहना और व्यस्तता के कारण अपने से दूर होते जाना आजके मानव की नियति है। विज्ञान ने जितनी दूरियाँ कम की हैं, आदमी उतना ही दूर जा पडा है। यहाँ तक कि पति-पत्नी पिता-पुत्र, भाई-बहन आदि घनिष्ट से घनिष्ट रिश्ते टूट रहे हैं। फलत: आज का व्यक्ति अकेला रह गया है, दुनियाके इस कोने से लेकर उस कोने तक परस्पर विरोधी शक्तियाँ स्वार्थन्ध होकर एक दूसरे को मिटाने में तल्लीन हैं। यह सब आज की स्थिती को जैनेन्द्र कुमारजीने अपने उपन्योंसों में चित्रित किया है उनके बारह उपन्यासों में ये समस्याँ हैं। परिवार पर ही समाज आधारित हैं। परिवार टूटने से उसका असर समाजपर होता हैं, और समाज निम्न स्थर पर जा पहूँचता है।

जैनेन्द्र कुमार ने अपने बारह उपन्यासों की रचना की हैं उसमें प्रारंभिक उपन्यास और साठोत्तरी उपन्यास ऐसे दो भाग बनाकर र उसमें पारिवारिक समस्या देखाने का प्रयास करने पर यह पाया गया कि सभी उपन्यासों में जैनेन्द्रजी ने पारिवारिक समस्याएँ प्रस्तुत की हैं।

प्रारंभिक उपन्यास में आपके परख, सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी मैं चार उपन्यास स्वातंत्र्यपूर्व के हैं, और सुखदा, विवर्त, व्यतीत और जयवर्धन ये चार स्वातंत्र्योत्तर हैं।

जैनेन्द्र कुमारजी ने परख, सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी, [स्वातंत्र्यपूर्व] और सुखदा, विवर्त, व्यतीत, जयवर्धन [स्वातंत्र्योत्तर] में जैसे पारिवारिक समस्याएँ बताये हैं, उसी प्रकार मुक्तिबोध, अनन्तर, अनामस्वामी और दशार्क इन साठोत्तरी उपन्यासों में भी पारिवारिक समस्याएँ बताने का प्रयास किया है, लेकिन उसमें बहुत अन्तर है। पहले पारिवारिक समस्या से पीडित नारी विद्रोही नहीं बनती लेकिन साठोत्तरी में नारी स्वतंत्रता के लिए खूद विद्रोह करती है, । और यह बताने के लिए जैनेन्द्र जीने भाषा, शिल्प, प्रसंग, पात्र यह सब अलग प्रकार का अपनाया है।

स्वातंत्र्यपूर्व उपन्यास परख सुनीता, त्यागपत्र और कल्याणी में उन्होंने पारिवारिक समस्याएँ थोडे अलग प्रकार सी बतायी हैं।

परख की रचना १९२९ ई. में की उसमें बाल- विधवा समस्या को उठाया है। कट्टो जिस ग्रामीण समाज में पली थी वहाँ उसकी जाति में विधवा-विवाह मान्य नहीं था। अपने वैधव्य से अज्ञात कट्टो अपने पडोसी और वकील सत्यधन से पढती और प्रेम भी करती थी। सत्यधन के मन में भी कट्टो के प्रति प्रेमभावना जाग जाती है। लेकिन जब विवाह के बारे में बहस होती तब सत्यधन विवाह को लेकर द्वन्द में रहाता है। उसकी माँ भी इस विवाह के खिलाफ है। सत्यधन कट्टो के विवाह के बोझ को सिर से टाल देता है क्यों कि समाज को ऐसा विवाह मान्य नहीं है। फिर सत्यधन "गरिमा" के साथ विवाह करता है। क्योंकि, गरिमा शिक्षित, उच्चकुल की और उसके पिता वकील साहब का धन सत्यधन के लिए आकर्षण था। बिहारी का आमंत्रण मिलते ही सत्यधन, बिहारी और उसके

परिवार के साथ कश्मीर गया। वहाँ शादी करके अपने गाँव आता है लेकिन गरिमा गाँव से शीघ्र चली जाती है, बापके घर की सुख-सुविधा छोडकर वह धन के लिए रूठे हुए पति के साथ नहीं रह जाती।

"सुनीता" में समाज की आधार शिला "घर" या "कुटुम्ब" का निरूपण है। इस उपन्यास में सुनीता - श्रीकान्त नामक दंपति से बने "घर" में "हरिप्रसन्न" नामक एक बाहय व्यक्ती के प्रवेश से उत्पन्न समस्या का चित्रण है। सुनिता रूप-गुण-संपन्न और उच्च सुखी कुटुम्ब की सुशिक्षित कलाप्रिय नारी थी। विवाह के बाद उसका वकील पति श्रीकान्त - दोनों सन्तोषी थे। श्रीकान्त अनन्य सुन्दरी सुनीता को पाकर स्वयं को भाग्यशाली मानता था, परन्तु सुनीता को रिझाने एवं सन्तुष्ट करने में असमर्थ था। इस अनमने असंपूर्ण वातावरण में श्रीकान्त बार बार अपने मित्र हरिप्रसन्न का जिक्र करता था। सुनीता भी पति से वर्णित उसकी अनन्यता एवं असाधारणता को जानने के लिए उत्सुक थी। एक दिन हरिप्रसन्न आ जाता है, उसी दिन उन दोनों को अकेले छोडकर श्रीकान्त स्वयं लाहोर जाता है। और वहाँ जाकर उसने सुनीता को पत्र लिखा, कि हरिप्रसन्न की क्षमता का दुनिया को लाभ मिले। अत: श्रीकान्त का अनुरोध था - "तुम इन दिनों के लिए - अपने को उसकी इच्छाके नीचे छोड देना। यह समझना कि मैं नहीं हूँ, तुम हो और तुम्हारे लिए काम्य कर्म कोई नहीं है। इस भाँति निषिद्ध कर्म भी कोई नहीं रहेगा। इसके लिए निस्सन्देह बडी साधना की आवश्यकता है। "

१. "सुनीता" जैनेन्द्रकुमार पृ. १४०-१४१।

पत्नी को ऐसा आदेश देनेवाला पति समाज में बिरल है। सुनीता मानों उसी साधना में कार्यरत थी। इस एकान्त में हरिप्रसन्न का सुनीता के प्रति आकर्षण बढ़ता गया। एक दिन हरि जब उसे जंगल में आये दल के गुप्त स्थान पर ले गया तो वहाँ पुलिस के खतरे से उन्हें जंगल में ही सुरक्षित स्थान पर रहना पड़ा। वहाँ हरि की वासना को अभिव्यक्ति मिली। इस मोह - मुग्ध काम अभुक्ति से पीडीत और सुनीता को समूची चाहनेवाले व्यक्ती के सामने सुनीताने अपना निरावरण शरीर प्रस्तुत किया

"तुम्हें काहे की झिझक है बोलो, । मैं ने कभी मना किया है? तुम मरो क्यों ? मैं तुम्हारे सामने हूँ। इन्कार कब करती हूँ। लेकिन अपने को मारो मत । हरि बाबू, मारो मत, कर्म करो। मुझे चाहते हो, तो मुझे ले लो। " १

पति के आदेशानुसार आत्म - समर्पण करने वाली सुनीता ने पति को सब बता दिया इस से पति-पत्नी के प्रेम में पहले से भी अधिक स्वस्थता आई। सुनीता-श्रीकान्त जैसे परोपकारी पति-पत्नी और हरि जैसा असन्तोषी, अव्यक्त एवं असाधारण मित्र मिलना असंभव है। परख में "कट्टो" के विवाह को समाज ने मान्यता नहीं दी थी क्यों कि वह विवाह संस्था के खिलाफ था, लेकिन यह विवाह धर्म, समाज की व्यवस्था, मर्यादा के अनुसार ही हुआ है, लेकिन यह कहाँ तक ठीक है, समाज इसे क्या कहेगा ? समाज में ऐसे परिवार रहने से उसका समाजपर क्या असर होगा, इससे शायद पारिवारिक समस्या बढने की संभावना है।

१. "सुनीता" जैनेन्द्रकुमार पृ. १८४

"त्यागपत्र" में समाज दर्शन मृणाल से सम्बन्धित घटनाओं के द्वारा होता है। उपन्यास में प्रमोद के अतिरिक्त उसके माता-पिता बुआ मृणाल ये चार सदस्य इस मध्यवर्गीय परिवार में हैं। प्रमोद को अपनी सबती चंचल बुआ मृणाल के बाल्य जीवन की स्मृति है। बाद में मृणाल का अपनी सखी शीला से स्नेह, शीला के घर आना-जाना और वहाँ उसके बडे भाई से सम्पर्क, इसी कारण उसका प्रमोद की माँ द्वारा बेंत से पीटा जाना, और फिर बुध्द आदमी से मृणाल का शीघ्रतासे विवाह हो जाता है। परन्तु शीला के भाई से प्रेम करने की उसकी बात पति को ज्ञात होते ही वह निर्वासित हो गई है, और जिस कोयलेवाले बनिये ने मृणाल का भरण-पोषण किया, उसकी स्वार्थपरता को अच्छी तरह जानती हुई भी वह उसकी कृतज्ञ है, और उसे छोडना नहीं चाहती। गर्भवती अवस्था में कोयलेवाला उसे व्याभिचारिणी मानकर निराश्रित छोडकर चला जाता है। मृणाल को कन्या होकर मर जाती हैं। ट्यूशन द्वारा अपना भरण पोषण करती है, लेकिन सामाजिक प्रवाद के कारण यह काम छूट जानेपर वह जिन्दगी में बिना लक्ष्य के बहती हुई एक दिन-टूट कर समाप्त हो जाती है।

इन तमाम प्रसंगों में से गुजरती हुई मृणाल समाज के खिलाफ कुछ करना उचित नहीं समझाती वह प्रमोद से कहती है - "तुम परवाह नहींकरो भाई, तो चल सकता है। लेकिन मैं तो ऐसे नहीं कर सकती... । मैं समाज को तोडना-फोडना नहीं चाहती हूँ। समाज टूटा कि हम फिर किस के भीतर बनेंगे ? या कि किसके भितर बिगडेंगे ? इसलिए मैं इतना ही कर सकती हूँ, कि समाज से अलग होकर मंगल कांक्षा में खुद टूटती रहूँ। .... जो समाज में हैं, समाज की प्रतिष्ठा कायम रखने का जिम्मा भी उन पर है। "

१. "त्यागपत्र" "जैनेन्द्र कुमार" पृ. ७२

यानी "मृणाल" की समाज ने ही ऐसी हालत बना रखी हैं, फिर भी मृणाल अपने हित के बारे में सोचने के अलावा समाज के बारे में ही सोचती है।

स्वातन्त्र्य-पूर्व के अन्तिम उपन्यास, "कल्याणी" का कथानक भी पूर्ववर्ती उपन्यासोंसा नायिका प्रधान ही है। "त्यागपत्र" में नारी के "बाहर" को "सुनीता" में "बाहर" का "घर में आनेका और "कल्याणी" में नारी के "घर" और "बाहर" के द्वन्द्व का चित्रण है। नायिका कल्याणी या श्रीमती असरानी डाक्टरनी थी, जो घर संभालकर धन के लिए प्रेक्टिस भी करती थी। पति बिल्डींग कॉन्टेक्टर थे, कल्याणी, भावुक, सहृदय, बुध्दिशाली एवं उदार प्रकृति की सिंधी होते हुए भी अपने पति को हिन्दी कविताएँ सुना: चुकी थी। " १

लेकिन डा. असरानी शंकालु व्यक्ति थे, परन्तु धनोपार्जन में कल्याणी को दुधारु गाय समझाकरसामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाने में कल्याणी से सहायता चाहते ह थे। वह कभी प्रीमियर पर तो कभी डा. भटनागर पर संदेह करते हैं। एक बार कल्याणी को रास्ते पर जूतों से पीटने के कारण पाँच दिन वह गायब रही तब वे सीधे डा. भटनागर के घर गये और कहा " मेरी स्त्री को तुम उड़ाकर ले आये हो। लाओ, निकाल कर दो। "और फिर समूचा घर एक एक कमरा, और ट्रन्क तथा बक्स देखें और बँधे बिस्तर खुल गये। [2] "इस से यह पता चलता है कि कैसे विचित्र व्यक्तित्व का यह पति था। वह कभी पैसों के लिए कल्याणी की खुशामद भी करते हैं। कभी उसको संदेह से देखते हैं उसको जूतों से मारते हैं, । शारिरीक और मानसिक अत्याचार एवं शोषण किया जा रहा था, एक दिन कल्याणी एक बच्ची को जन्म देती है लेकिन उसमें बच्ची और कल्याणी दोनों भी मर जाते हैं।

१. कल्याणी जैनेन्द्रकुमार पृ ५ पृ. २९ ३०।

" कल्याणी " विलायत से डाक्टरी करके आयी है, पति के अनुसार घर का सब काम देखने पर भी पति उसपर अत्याचार करता है, उसको वह सहती है, लेकिन पति के खिलाफ कुछ आवाज नहीं उठाती, वह विद्रोही नहीं बनती ।

यानी स्वातंत्र्यपूर्व उपन्यासों में समाज के नियम, रूढी-परंपराएँ, स्त्रियों के लिए ऐसे ही थे, उसीके कारण भारतीय नारी अन्याय, अत्याचार, के खिलाफ कुछ कहती नहीं है । लेकिन स्वातंत्रोत्तर काल में जैनेन्द्र के जो चार उपन्यास है, विवर्त, व्यतीत, सुखदा और जयवर्धन, इसमें थोडा परिवर्तन आ गया है । पहले स्वातंत्र्यपूर्व स्त्री को इतनी स्वातंत्रता नहीं थी । उसके बाद बहुत कुछ स्वतंत्रता मिली है, ऐसी बात नहीं, लेकिन " स्त्री " अपने को जो चाहे वह कर रही है ।

सुखदा एक सम्पन्न परिवार की अत्यन्त महत्वाकांक्षिणी नारी है, अपने रूप और सौन्दर्य पर उसे गर्व है, पति और परिवार के उसने अनेक रंगीन स्वप्न संजोये हैं, किन्तु किसी कारणवश सुखदा का विवाह केवल डेढ सौ रूपया मासिक पाने वाले एक युवक कान्त से हो जाता है, जीवन के आरम्भ में वह पति प्रेम में सब कुछ भूल जाती है, किन्तु जब वास्तविकता सामने आने लगती है, तो वह स्वयं को असन्तुष्ट और खोखला अनुभव करती है । उसको अतृप्ति एवं अहं उसे अभिव्यक्ति का मार्ग बाहर ढूँढने को विवश करते हैं । उसका पति कान्त भी सुखदा को नियन्त्रण में नहीं रख सकता । वह अपने आप को सुखदा के योग्य नहीं समझता, तथा आर्थिक स्थिति के कारण भी उसमें कुछ ग्रंन्थियाँ पड गई हैं । ऐसे समय ही उसके घर एक क्रान्तिकारी आकर रहता है । पर क्रान्तिकारी गंगासिंह सुखदा के जीवन को एक दिशा देकर जाता है । बादमें हरिदा के कारण मि. लाल को और सुखदा की भेंट होती है,

और फिर सुखदा अपने पति का घर छोडकर मि. लाल के साथ ही रहना पसन्द करती है । वह क्रान्तिदल में शामिल होती है । वह घर से निराश होकर गयी थी, बाहर सुखी बनने के लिए, लेकिन क्षय रोग से ग्रस्त होकर और दुःखी ही हो जाती है । यानी कान्त और सुखदा का आर्थिक अभाव के कारण परिवार टूटता है । वह घर, बाहर कहीं तृप्त नहीं रह सकती । यानी वास्तव में सुखदा नैराश्यपूर्ण मनोव्यथा से ग्रासित नायिका है । जब पति की ओर से अतृप्त होती है, तो पर पुरुष प्रेम की अभिलाषिणी बनकर घर छोडकर बाहर जाती है, किन्तु बाहर के जीवन में प्रविष्ठ होकर भी अतृप्त ही रहती है । अपने जीवन को व्यर्थ समझते हुए वह पश्चाताप से कहती है, " सब उजड चुका है और अपने कर्मों मैं ने उजाडा है । आज यद्यपि मैं जानती हूँ कि मुझे छोडकर कुछ भी नहीं बिगाडा है वही गृहस्थी लहलहाती हुयी आज भी जुड सकती है, पर हाय मैं उसके योग्य होती तो । " १

इस प्रकार घर तो उसका छूटता ही है, बाहर भी टूटे बिना नहीं रहता । सामाजिक जीवन एवं पारिवारिक जीवन में एक प्रकार का सामंजस्य बिठाने की प्रक्रिया में वह निराशा की भावना से ग्रस्त होकर आत्मपीडा को भोगती रहती है ।

" सुखदा " के समान " विवर्त " भी दमित वासना से उत्पन्न अतृप्ति की अवसादपूर्ण अन्त की कहानी है । जैनेन्द्रकुमार की रचनाओं में यह प्रथम पुरुष नायक प्रधान लघु उपन्यास है । उपन्यास की नायिका भुवनमोहिनी एक अवकाश प्राप्त न्यायाधीश की कन्या है । जितेन एक

---

१. " सुखदा " जैनेन्द्रकुमार पृ. ३.

अंग्रजी पत्रिका के सम्पादकीय विभाग में कार्य करता है। दोनों एक दूसरे से प्रेम करते हैं, किन्तु आर्थिक विषमता दोनों के बीच दीवार बन कर आती हैं, और भुवनमोहिनी का विवाह इंग्लैण्ड से लौटे बैरिस्टर नरेशचन्द्र के साथ हो जाता है। प्रेम की असफलता जितेन को क्रान्तिकारी बना देती है। चार साल बाद जितेन ट्रेन उलटने की दुर्घटना में बुरी तरह घायल होता है। वहाँ से भाग कर वह भुवनमोहिनी के घर आश्रय लेता है। भुवनमोहिनी लगन से उसकी सेवा करती है, जिससे उसे शीघ्र स्वास्थ लाभ होता है। फिर कुछ दिन बाद दोनों का पुराना प्रेम फिर से जाग उठता है। भुवनमोहिनी आत्म समर्पण कर देती है, और जितेन पुलिस को आत्म समर्पण कर देता है।

जितेन की दमित कामवासना उसे प्रेम की असफलता के कारण क्रान्तिकारी बनाती है। विवाह की असफलता ही भुवन के संघर्ष का कारण बन जाती है। भुवनमोहिनी जितेन की प्रेमिका और बाद में अन्य की पत्नी के रूपमें पहले प्रेयसी बादमें पत्नीत्व के संघर्ष के मध्य स्वयं को प्रेयसीत्व के अधिक निकट पाती है। वह जितेन पर झुक कर कहती है - " मैं सब कुछ हूँ तुम्हारी। " जितेन ने पूछा - " और पति की ? " " पत्नी ..... । " १

यानी भुवनमोहिनी अपने पति से बढ़कर प्रेमी को चाहती है।

" प्रेम मूल जीवन-शक्ति को कह सकते हैं। परन्तु उपयोगी बनाने के लिए आग को अपने चूल्हे और दिये में सीमित करके रखना पड़ता है वैसे ही विवाह आदि सम्बन्धो में प्रेम को नियोजित करके फलप्रद बनाया

---

१. " विवर्त [जैनेन्द्रकुमार] पृ. ४०.

जाता है, नियोजन के प्रयोजन को लाँघकर, जब विवाह स्वयं प्रेम से अनबन बना बैठा है, तब जीवन शक्ति का -हास होता है । कुण्ठाएँ जन्म लेती हैं, रोग-शोक उपजते हैं और हत्या, युद्ध आदि की आवश्यकता बन जाती है । "

" व्यतीत " का सारा कथाचक्र इसी विचार के इर्द-गिर्द बुना गया है । जयन्त, अनिता को पत्नी रूप में न पा सकनेके कारण कुंठित है । चन्द्री अपने पति जयन्त और अपने बीच अनिता का स्थान स्वीकार नहीं कर पाती । उर्मिला को चन्द्री अपने और कुमार के बीच संकट लगती है । सारा प्रपंच और सारे द्वन्द्वों के मूल में प्रेम और विवाह के बीच अनबन ही कारण रूप में है । अपनी इसी विचार धारा के कारण जैनेद्र वर्तमान की दृष्टि से अत्यन्त अभाव और अस्वाभाविक प्रसंगों की योजना " व्यतीत " में कर सके हैं । चन्द्री द्वारा अनिता और जयन्त के एक साथ सोने का आयोजन अथवा उपन्यास के अन्त में अनिता के पति द्वारा जयन्त और अनिता को होटल के कमरे में छोड जाने की व्यवस्था ऐसे ही प्रसंग हैं ।

जयन्त की कुंठाओं की मुक्ति के लिए " सुनीता " के समान ही अनिता जयन्त के सामने आत्म समर्पण करती है, " जयन्त रात की बात भूल जाना । मै सुध में न थी । अब सुध में हूँ । कहती हूँ, मैं यह सामने हूँ । मुझको तुम ले सकते हो । समूची को जिस विधि चाह ले सकते हो । स्त्री सदा यह नहीं कहती । बेहयाई की हद पर भी नहीं कहती, लेकिन मैं सुध रख कर कहती हूँ ।.... तुम न रहो लेकिन मैं सदा-सदा तुम्हारे सुभीते के लिए रहने को तैयार हूँ.... जयन्त क्यों डरते हो ? कौन कितने दिन रहता है " । १

---

१. " व्यतीत " जैनेन्द्रकुमार पृ. १६३ ।

जैनेन्द्रकुमार के आरंभिक उपन्यासों में " जयवर्धन " यह आखरी उपन्यास है, स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में प्रेम-विवाह तथा विवाह-विच्छेद आदी के प्रश्न मूल प्रतिपाद्य रहे हैं, लेकिन " जयवर्धन " में वैसी बात नहीं है । इस में " जयवर्धन " और " इला " का विवाह के पूर्व प्रेम है, लेकिन अन्य उपन्यासों के जो पात्र रहे हैं, उनके अनुसार नहीं है, यह प्रेम अलग है । जयवर्धन सामान्य - साधारण व्यक्ति नहीं, राष्ट्र का अधिनायक है । इला विवाहित पत्नी नहीं है, और पत्नीत्व के ही रूपमें साथ रहती है । देशमें उसके इस सम्बन्ध को लेकर पर्याप्त विद्रोह है, जो स्वामी चिदानन्द एवं उसके दलके व्यक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्त होती है । जय और इला दोनों ही विवाह के पक्षमें हैं, किन्तु इला के पिता, आचार्य की अनुमति का अभाव, मार्ग की बाधा है । दोनों अपनी संस्कारवश मर्यादा से विवश विवाह को अनुमति की प्रतिक्षामें है और अनुमति के अभाव में वैसा ही अभिशप्त जीवन स्वीकार किये हुए हैं । अथा ही ये स्थितियाँ प्रेम के जिस रूप को उभारकर सामने लाती है, उसमें सामाजिक और संस्कारगत वर्जनाओं के कारण कुंठा अथवा निराशा चित्र कम, पीडा सहते हुए प्रेम के उदात्त रूप का चित्र ही अधिक प्रबल है । सुनीता, कल्याणी, मृणाल, सुखदा, अनिता, भुवनमोहिनी, आदि का धार्मिक परंपरा और सामाजिक मर्यादा के अनुसार विवाह होकर भी उनकी स्थिति कैसी कैसी बन गयी है, लेकिन इला और जयवर्धन को समाज मान्यता नहीं दे रहा है, लेकिन जैनेन्द्र ने जय और इला के विवाह-रहित प्रेम इतना दिव्य और गौरवमय रूप दिया है । जब इला जय की इस मर्यादा और संयम से कष्ट पाती हैं, किन्तु जैनेन्द्र का विश्वास है, कि प्रेम में यही पीडा, व्यथा ही शक्ति बन जाती है, यद्यपि उसे सहना बडा कठिन होता है -

" प्रेम की गति न्यारी है, सुख उसमें नहीं है । पर जो दुःख है, सुख के सुख से बडा है । उस व्यथा के आगे सब कुछ तुच्छ है । पर व्यथा सहना दूभर होती है । " १

जैनेन्द्रकुमार के आरंभिक उपन्यास और साठोत्तरी उपन्यासों में पारिवारिक समस्याएँ जो चित्रित हैं, उसमें कुछ विशेष फर्क नहीं है, लेकिन पारिवारिक समस्या के कारण आरंभिक उपन्यासों की नायिकाएँ समाज, कानून इन्हीं के खिलाफ विद्रोह नहीं करती, बल्कि अन्याय, अत्याचार, समाज और पति इन्ही से सहती रहती हैं । मगर साठोत्तरी उपन्यासों में नायिकाओं मे परिवर्तन आया है, वे समाज, सरकार, कानून के खिलाफ आवाज उठाना अपना फर्ज समझती हैं । इसका कारण स्वतंत्र्य भारत और नारियों की स्वतंत्रता के कारण यह परिवर्तन हुआ है ।

आरंभिक उपन्यासों में कट्टो, मृणाल, सुनीता, कल्याणी, अनिता, बुधिया, भुवनमोहिनी आदि नायिकाएँ विद्रोह करने से समाज टूटेगा, उसमें तो हमें रहना है, इसलिए समाज के खिलाफ कुछ करना गलत समझते हैं, लेकिन - उनकी यह हालत समाज ने ही बनायी है, यह वे भूल गये हैं । साठोत्तरी में जो चार उपन्यास आते हैं, मुक्तिबोध, अनन्तर, अनामस्वामी, और दशार्क । इनमें चित्रित नारियाँ-राजश्री, नीलिमा, अपरा, उदिता, वसुन्धरा, रंजना, सकीना, मेहन्दीबाई, पारमिता, मालती, आदि नायिकाएँ विद्रोही बनकर समाज के, सरकार के खिलाफ आवाज उठा रहे हैं । साठोत्तरी में सिर्फ नारी पात्र ही ऐसे हैं,

---

१. " जयवर्धन " जैनेन्द्रकुमार पृ. १९० ।

ऐसी बात नहीं, पुरुष पात्र भी पूँजीपति लोगों के खिलाफ खड़े हैं, क्रान्तिकारी बन गये हैं । " मुक्तिबोध " में चित्रित मि. सहाय की यौवन वर्ष के वय में भरे-पूरे परिवार के होते हुए भी, सहाय के नीला से प्रेमसम्बन्ध बने हुए हैं, और इन सम्बन्धों के विरुद्ध सहाय की पत्नी, समझदार पुत्र, बाल-बच्चोंवाली पुत्री, और जामाता किसी के मन में कोई आपत्ति नहीं हैं, अपितु वे सब नीला को परिवार की हितैषिणी के रूप में देखते हैं ।

भारतीय परिवारों में इस प्रकार के सम्बन्ध न केवल पति-पत्नी के सम्बन्ध में अशांति एवं कलह ... उत्पन्न कर देते हैं, वरन् संपूर्ण परिवार का ढाँचा ही हिला डालते हैं । लेकिन " मुक्तिबोध " में जैनेन्द्र ने यह बताया है, कि सहाय की पत्नी राजश्रीने न केवल पति के प्रेयसी से समझौता किया है, वरन् वह उसे अपने पति की उन्नति के लिए अनिवार्य मानती है, - " हाँ, आदमी में देवता होता है । और पत्नी नहीं प्रेयसी उसे जगाती है । तुम अपने देवत्व से लड़ते क्यों हो ? तुमको तृप्त और प्रसन्न आते देखूँ तो क्या इसमें मुझे प्रसन्नता न होगी ? पर आज तुम वैसे नही दीखते हो । मैं नहीं मानतीं, कभी नीलिमा की तरफ रही होगी । बीच में जरूर तुम्हीं उखाड़ पड़े होंगे । " १

मुक्तिबोध को राजश्री और आरंभिक में व्यतीत की अनिता, उदिता, और चन्द्रकला इन्ही में बहुत फर्क है । आरंभिक में पत्नी पति को और किसी स्त्री से सम्बन्ध रखना उचित नहीं समझती । इससे उनके परिवार में संघर्ष छिड़ जाता हैं । लेकिन साठोत्तर में मि. सहाय

---

१. " मुक्तिबोध " जैनेन्द्रकुमार पृ. ७० ।

नीलिमा के साथ सम्बन्ध रखते हैं, वैसे उनकी पत्नी राजश्री कुछ नही कहती बल्कि वह भी महादेव ठाकुर के साथ कुछ ऐसा ही बर्ताव करती है ।

यानी विवाह के पश्चात पुरुष का पत्नी के अतिरिक्त अन्य स्त्री से तथा पत्नी का पति के अतिरिक्त अन्य पुरुष से सम्बन्ध बना रह सके, इसलिए दोनों ओर से उदारता की अपेक्षा है, और जैनेन्द्रजी ने यही साठोत्तरी उपन्यासों में सीमातीत रूप में विद्यमान रखा है । नीलिमा और उसके पति के सम्बन्धों में स्वयं नीलिमा के शब्दों में इस प्रकार है, " वह अपने को आज़ाद रखते हैं, और मैं इसमें इनकी सहायता करती हूँ । इसी में मेरी आज़ादी अपने आप बन आती है । अपने से पूछो, मेरी आज़ादी का श्रेय क्या तुम को दोगे, मुझे नहीं दोगे ? "

साठोत्तरी उपन्यासों में जैनेन्द्र का दूसरा उपन्यास " अनन्तर " में कैम्ब्रिज से साहित्य में डाक्टरेट प्राप्त " अपरा " विलायत में दाम्पत्य के आठ वर्ष निभाकर तलाक लेकर भारत चली आयी है । भारत के नैतिक वातावरण में वह पुर्नविवाह अथवा पत्नीत्व की सम्भावना समाप्त देखती है । यूँ हीवह अपने को एक में खो सके, यह उसे अपने लिए उचित दीखता है, अब तक के जीवन में उसने जो कुछ सीखा और जाना है, उसके आधारपर वह अपने जीवन को एक प्रयोग के परीक्षण में लगा देना चाहती है, और इसके लिए उसे मिल जाते हैं, चारु और आदित्य । चारु को देखते ही अपरा जान लेती है, कि, उसमें डर है,

---

१. " अनन्तर " जैनेन्द्रकुमार पृ. १५९ ।

अपना डर, पतिका डर, और अपरा यह भी समझ लेती है, कि चारु और आदित्य की गृहस्थी ऊपर से भारी-पूरी दीखती है, पर भीतर से खोखली है । अतः चारु की सहायता के लिए उसका पति उसे पूरी तरह सौंपने का दायित्व अपरा अपने ऊपर लेती है । प्रयोग की विधि वह जानती है, " वूमन इज टू मैन ए चैलेंज, एन इंडयूसमेंट, ए फुलफिलमेंट एंड फायनली ए डिस-इल्यूजनमेंट । " १ इस विधि के अनुसार वह आदित्य के सम्मुख अपने आपको पहले एक चुनौती के रूप में रख, उसे अपनी ओर आकर्षित कर लेती है और फिर पूरी परिक्षण-विधि से गुजरती हुई अपने अपूर्व विलक्षण त्याग का परिचय देकर चारु और आदित्य की सुखी गृहस्थी को फिर से हरा-भरा कर स्वयं बीच से हट जाती है । " अनन्तर " में अपरा जैसा रहना चाहती है उसी प्रकार उच्च एवं आध्यात्मिक विचारोंवाली वाग्मी विदुषी, कन्या अविवाहित रहने में स्त्री जीवन की सार्थकता देखती हैं । उसकी दृष्टि में सृष्टि चलाने के लिए स्त्री-पुरुष का विवाह में बँधा जाना अनिवार्य हो सकता है, लेकिन सम्पूर्ति उसमें नहीं है, - " दोनों व्यक्ति रूप में एक-दूसरे को पहचाने और सहयात्री होकर स्वेच्छा से उन लोकोत्तर शक्तियों के मात्र वाहक बन जाएं तो ही सच्ची सार्थकता मिल सकती है । " २

प्रारंभिक उपन्यासों की नायिकाएँ मृणाल, कल्याणी, जैसी अपरा नहीं है । मृणाल का तो पूरा जीवन भारा ही है । पहले प्रेमी से खतरा पहुँचा, फिर पति से निर्वासित होकर भटकना पडा, उसके बाद

---

१. " अनन्तर " जैनेन्द्रकुमार पृ. ११२ ।
२. " अनन्तर " जैनेन्द्रकुमार पृ. १५९ ।

एक निम्न दर्जे के कोयले वाले बनिया के साथ रहकर गर्भवती हो जाती है, लेकिन जीवन गुजारना ही चाहती है, ट्यूशन लेती है, वेश्या वस्ती में कुछ दिन बिताती है, वहीं उसकी मृत्यु । यानी जिन्दगी में एक बार धोखा खाने से उसमें सुधार नहीं, मगर " अन्तर " की " अपरा " पति से एक बार तलाक लेकर फिर किसी की पत्नी नहीं बनना यही निर्णय लिया है, और दूसरों के जो पारिवारिक संघर्ष छिड जाते हैं, उसमें परिवर्तन लाने के लिए ही अपनी जिन्दगी का मकसद बनाया है । उसी तरह इस विवाह से क्या लाभ होता है, यह देखकर वाग्मी कन्या, जैसी नारियाँ विवाह करने को ही तैयार नहीं हैं, लेकिन आरंभिक उपन्यासों में ऐसी कोई नायिका नहीं मिलती । प्रेम में असफलता मिली तो विवाह, और विवाह में अतृप्ति रही तो फिर प्रेयसीत्व यानी प्रेम उनको सच्चा पत्नीत्व या सच्चा प्रेयसीत्व कुछ प्राप्त न हुआ, जिन्दगीभर प्रेम कुण्ठा से विवश होकर रहना पडा है, प्रेयसीत्व में प्रेम के सामने विवस्त्र होना, पति को छोडकर प्रेमी के पास जाना, यही सब कुछ किया है । लेकिन वैसी स्थिति अन्तर, मुक्तिबोध, दशार्क में नहीं हैं ।

इससे स्पष्ट है, कि, आरंभिक उपन्यासों की नायिकाएँ निर्बल थीं, शायद वैसी समाज की व्यवस्था रही होगी, लेकिन परिवर्तन के कारण जैनेन्द्रजी ने साठोत्तरी उपन्यासों की नारी के विचार बदल दिये हैं ।

जैनेन्द्रकुमारजी के साठोत्तरी उपन्यासों मे " अनामस्वामी " यह एक उपन्यास है, उसमें प्रेम तथा विवाह की अपेक्षा ब्रहमचर्य को मुख्य प्रतिपाद्य के रूप में प्रस्तुत करके अपने सामाजिक चिन्तन का स्वरूप और स्पष्ट किया है । " अनामस्वामी " में वैसे कुछ पारिवारिक समस्याएँ

बतायी हैं । दयाल की नातिन " उदिता " के माध्यम से प्रेम और विवाह का आर्थिक पक्ष रखा गया है । किन्तु युवा-पीढ़ी के इस दृष्टिकोण का समर्थन जैनेन्द्र ने नहीं किया । अमरिका में रहनेवाले दो युवक एक पत्नी [उदिता] से काम चलाना चाहते हैं । उदिता को " विवाह की पवित्रता की धारणा बासी हो चुकी है, और गृहस्थी का आधार आर्थिक ही होता है । " १ उदिता आर्थिक स्वतंत्रता चाहती है, लेकिन अर्थोपार्जन के लिए प्रेम को विनिमय का साधन नहीं बनाना चाहिए । किसी के साथ प्रेम प्रस्तुत करके या प्रेम बढ़ाकर आर्थिक सुविधा प्राप्त करना पारिवारिक तथा सामाजिक स्वास्थ में स्खलन निर्माण करती है, जो बिलकुल असामाजिक बात बन जाती है । आर्थिक सुविधा तो श्रम से प्राप्त करनी चाहिए । जैनेन्द्र प्रेम के विनिमय में प्राप्त धार्मिक सुविधा पारिवारिक समस्या कैसी बन जाती है, इसका चित्रण उदिता के द्वारा चित्रित करते हैं । उदिता अमरीका जाती है, " उदिता अपनी दूर है पर प्रेम के विनिमय में वह आर्थिक सुविधा अपना बैठी तो क्या होगा । बहुत आसान है, यह, पर इसमें धोखा रहता है, तभी विवाह रचा गया है, जिसमें अभिभावक शामिल होते और जो ऐसे निजी न रहकर सामाजिक हो जाता है । नहीं तो पैसा प्यार को सौदे पर ले जाता है । मुझे यही डर है । " २

---

१. " अनामस्वामी " जैनेन्द्र पृ. २०५ ।

२. " अनामस्वामी " जैनेन्द्र पृ. १७१ ।

अनामस्वामी में वसुन्धरा और कुमार में कुछ पारिवारिक समस्या निर्माण करने का काम शंकर उपाध्याय द्वारा किया गया है, जैसे कुमार को लंबी बीमारी हो जाने का षडयन्त्र करता है । क्यों, कि वसुन्धरा को उपाध्याय चाहता था, लेकिन उसकी शादी कुमार के साथ हो गई थी । इससे वह प्रेम कुंठित हो जाता है, अपना विवाह करता है, फिर पत्नी को हत्या करता है, खुद आत्महत्या करने का प्रयास भी करता है, फिर वसुन्धरा को दुःख देता रहता है । उसका विवाह वसुन्धरा के साथ नहीं हुआ, इसलिए वह सामाजिक और धार्मिक मान्यताओं के प्रति आक्रोश है । धार्मिक रुढियों, सामाजिक मान्यताओं, और अध्यात्मवाद की जड़े उखाडने के पक्ष में है । शंकर उपाध्याय स्वच्छन्द प्रकृतिका व्यक्ति होने के कारण वह दो के बीच तीसरे को बाधा स्वीकार करने के पक्षमें नहीं है, इसी भावना से प्रेरित होकर वह इलाहाबाद में क्लब की स्थापना करता है । इस क्लब का लक्ष्य रुढियों से मनुष्य को मुक्ति दिलाना है । क्लब में प्रचलित विचारधारा के अनुसार स्त्री पुरुष, दो के बीच न राज्य को आने का हक है, न ईश्वर को । यानी शंकर उपाध्याय, आश्रम और समाज व्यवस्था के खिलाफ विद्रोही बन गया है । जैनेन्द्र के आरंभिक उपन्यासों में प्रेम में असफलता मिलने पर ट्रेन को गिराना जैसे " विवर्त " में जितेन ने रात पंजाब मेल गिरानेके कारण तिरसठ लोग मर जाते हैं, और दो सौ पन्द्रह घायल हो जाते हैं । प्रेम में असफलता पाकर यह जो बुरा कृत्य हुआ है, वैसा शंकर उपाध्याय से नहीं होता, बल्कि वह खुद आत्महत्या करता है, लेकिन उस में वह बचता है । बाद में क्लब की वगैरा स्थापना करके उसके द्वारा जिस समाज व्यवस्था के कारण विवाह में बाधा आयी थी।

उसी के खिलाफ आवाज उठाता है, विद्रोह करता है । " विवर्त " के जितेन जैसा नहीं । यह साठोत्तरी उपन्यासों में जैनेन्द्रजी ने बताया है । साथ ही साथ " उक्ता " को भी जैनेन्द्रजी ने आश्रम में लाया है ।

जैनेन्द्रकुमारजी का आखरी उपन्यास " दशार्क " है । इसमें प्रेम की शाश्वत समस्या को उठाया है और मूल नैतिक स्तर पर उसकी गहरी खुदाई की है, साथ ही साथ पैसे की समस्या भी आ जुडी है । इससे उसमें एक नया आयाम खुल आया है ।

दशार्क उपन्यास की नायिका रंजना और उसके पति शेखर दोनों सुशिक्षित है, समझदार है, मगर एक दूसरे को समझ नहीं पाते, जिस के कारण परिवार में संघर्ष होता है । और उनका परिवार टूट जाता है । ससुर जैसे अमीर बनने के चक्कर में शेखर जुआरी, शराबी बनकर बरबाद हो जाता है, इसी कारण उसकी पत्नी रंजना बाद में आर्थिक अभाव के कारण उससे दूर जाकर वेश्या बन जाती है । जिस तरह " दशार्क " में रंजना को पारिवारिक समस्या से वेश्या बनना पडा उसी तरह उसी के बिरादरी के मेहन्दीबाई, सकीना, मालती इन्हीं को भी इस रास्ते पर क्यों आना पडा यह सोचने का प्रयास किया, तो उनकी भी पारिवारिक समस्याएँ ही दिखाई देती हैं । जिस के कारण वे वेश्या बन गयी हैं ।

जैनेन्द्र के आरंभिक उपन्यासो में ऐसी पारिवारिक समस्या जरूर खडी हो गयी थी, लेकिन वेश्या बनने की नौबत किसी पर न आयी थी । लेकिन " दशार्क " की रंजना को वेश्या बनने के अलावा और कुछ पर्याय था या नहीं यह गंभीर सवाल है "मृणाल " ऐसी कुछ बनी

नहीं क्यों कि जैनेन्द्रजी को उस समय के अनुसार ऐसा चित्रित करना शायद ठीक नहीं समझा होगा । क्यों कि स्वातंत्र्यपूर्व काल में सामाजिक मर्यादा के कारण नारी को इतना स्वातंत्र्य नहीं था । पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था में नारियों का स्थान गौण था, इसलिए वे अन्याय, अत्याचार सहने के अलावा कुछ नहीं कर पाती थीं । सुखदा, कट्टो, कल्याणी, मृणाल, बुधिया की यही स्थिति है, त्यागपत्र में मृणाल प्रमोद से कहती है, " तुम परवाह नहीं करो भाई, तो चल सकता है, लेकिन मैं तो ऐसा नहीं कर सकती । मैं समाज को तोडना-फोडना नहीं चाहती हूँ । समाज टूटा कि हम फिर किसके भीतर बनेंगे ? या कि किसके भीतर बिगडेंगे ? इसलिए मैं इतना ही कर सकती हूँ, कि समाज से अलग होकर उसकी मंगलकांक्षा में खुद टूटती रहूँ । .... जो समाज में है, समाज की प्रतिष्ठा कायम रखने का जिम्मा भी उनपर है । " १ इस मृणाल को शीला का भाई डाक्टर यानी मृणाल प्रेमी, पति, कोयलेवाला इन्होंने फंसाया है, बुरी हालत बनाई है, फिर भी उनका ही हित चाहती है, समाज तोडना नहीं चाहती । सुनीता भी अपनी जिन्दगी में कुछ अलग मार्ग अपनाकर समझौता करती है । "कल्याणी तो एक विलायती डाक्टर है, पति जाली डाक्टर की उपाधि लेकर उस से विवाह करके फँसाता है, इतना ही नहीं बादमें उसे रास्तेपर जूते से मारता है, पत्नीपर संदेह से देखता है, फिर भी कल्याणी कुछ नहीं करती । एक बच्ची को जन्म देकर मर जाती है । वह बार बर कहती थी, मै मेरे लिए नहीं जी रही हूँ, मेरे पेट में जो शिशु है उसके लिए जी रही हूँ । याने इतना दु:ख सहकर भी ये नारियाँ जीवन बिताकर पति के खिलाफ कुछ नहीं कर पाती । लेकिन जैनेन्द्रकुमारजी ने साठोत्तरी उपन्यासों में यह बिलकुल अलग बताया है, मुक्तिबोध, अनन्तर, अनामस्वामी, दशार्क में पात्र विद्रोही बन गये हैं ।

---

१. "त्यागपत्र" जैनेन्द्रकुमार पृ. ७३ ।

ब] सामाजिक समस्या :-

सामाजिक समस्याका अर्थ समाजशास्त्र में इस प्रकार दिया है। समाजमें कुछ समय तक निर्माण हुयी ऐसी स्थिती जिसके कारण समाज में कुछ समय तक कुछ संकट या बाधा निर्माण होती है। सामाजिक यह शब्द इस अर्थ में इस्तेमाल किया जाता है। इस दृष्टिसे सामाजिक समस्या उसे कहा जाता है, जिसके कारण समाज में परिवर्तन के कारण कुछ असंगत स्थिति निर्माण होती है।"

भारतीय समाज जीवन पर औद्योगिकरण, नागरीकरण, आदिकी निर्मिती होकर उसका परिणाम भारतीय समाज जीवन विघटित होने में हो गया है। साथ ही साथ सामाजिक समस्या निर्माण करने का और एक महत्वपूर्ण कारण हो सकता है, और वह है, "पाश्चात्य आन्धानुकरण इसी चक्कर में लोग पडकर ही यहाँ की भारतीय, संस्कृति, पर असर हुआ है।

जैसा इस समस्यासे समाज परिवर्तन चाहते हैं तभी असंगत स्थिति निर्माण की संभावना है, इसलिए जैनेन्द्र कुमारके पहले जो आरंभिक आठ उपन्यास है इसमें चार स्वातंत्र्यपूर्व और चार स्वातंत्र्योत्तर हैं, इसमें उन्होंने समाज परिवर्तन के लिए एक अलग ढंग अपनाया हैं। मगर साठोत्तरी में कुछ दूसरा ढंग लिया है। उन्होंने बम को रेशमी मुलायम कपडे में बाँधा है और उसीमें परिवर्तन चाहते हैं।

जैसे मृणाल, "त्यागपत्र," कट्टो, "परख", बधिया, "व्यतीत", भुवन मोहिनी "विवर्त" अनिता, चन्द्रकला "व्यतीत" इला "जयवर्धन" आदी नारियाँ आत्मपीडा सेही जीवन बिताती हैं, कट्टो बालविधवा है, उससे प्यार करके विवाह समाज व्यवस्था के कारण सत्यधान नहीं करता। बुधिया की माँ मर जाने के कारण उसका पिता कलुआ ताडी पीता है, ताडीके उधारी देने के लिए पुत्री बुधिया के शरीर का व्यापार करना शुरु कर देता है। बुधिया की आनाकानीपर उसे बुरी तरह पीटती है। "कल्याणी" में उसका पति उसपर बहुत अत्याचार करता है, लेकिन वकील के मन में कल्याणी के प्रति आदर का भाव है कल्याणी पर अत्याचार

देखकर उसे कष्ट होता है। वह ऊपर से तटस्थ रहकर भी उसके लिए संवेदनशील रहता है। सिर्फ पतिसे ही ऐसा होता है, ऐसी बात नहीं समाजके भी लोग उसके इज्जत पर कीचड उछाला गया था वकील उनको सुनकर श्रीधर को समझाता है "श्रीधर तुम जानते हो, कि हमारे समाजमें स्त्रीकी स्थिति नाजुक है। अपनी ओर उस स्थिति को और विषम बना देना क्या क्षमा हो सकती है। पुरुषका दोष, दोष नहीं, वह पुरुषार्थ है, लेकिन स्त्री।" १ वकील के इस कथन से उसकाल की सामाजिक व्यवस्था "स्त्री" के लिए क्या थी, यह समझमें आती है, आज उसमें बहुत सुधार हुआ है, ऐसी बात नहीं। लेकिन उसकालसे आज की नारी थोडी ऊपर उठकर कुछ कह सकती है, इसलिए जैनेन्द्रकुमार जीने आरंभिक उपन्यासों में चित्रित नारी और साठोत्तरी उपन्यासों की नारीमें जगह जगह पर फर्क दिखाया है।

"मुक्तिबोध" में मि. सहाय के नीला से प्रेम सम्बन्ध बने हुए हैं, इन सम्बन्धों के विरुद्ध पत्नी, पुत्र, पुत्री, दामाद किसी के मनमें आपत्ति नहीं है, इतना ही नहीं सब नीला को परिवार की हितैषिणी के रूपमें देखते हैं। आरंभिक उपन्यासोंमें अगर ऐसा होता, तो परिवार में इस प्रकार के सम्बन्धोंमें पति-पत्नी के सम्बन्धमें अशान्ति एवं कलह उत्पन्न हो जाता इतना ही नहीं परिवार टूट भी जा सकता, लेकिन ऐसी स्थिति यहाँ नहीं होती। लेकिन साठोत्तरी में ऐसा नहीं बलकि सहाय की पत्नी राजश्रीने न केवल पति की प्रेयसी से समझौता किया है वरन् वह उसे अपने पति की उन्नति के लिए अनिवार्य मानती है - " हाँ, आदमी में देवता है। और पत्नी नहीं प्रेयसी उसे जगाती है।

---

१. "कल्याणी" जैनेन्द्र कुमार पृ. १७

तुम अपने देवत्व से लडते क्यों हो ? तुमको तृप्त और प्रसन्न आते देखूँ तो क्या इसमें मुझे प्रसन्नता न होगी ? " १

सहाय जिस तरह नीलिमा के साथ प्रेयसी के रूप में सम्बन्ध रखता है, उसी प्रकार उसकी पत्नी महादेव ठाकूर के साथ कुछ ऐसा सम्बन्ध रखती है । मुक्तिबोध के समान " अनन्तर " का कुछ ऐसा ही चित्रण है । जैनेन्द्रजी ने आरंभिक उपन्यासों से भिन्न नारी पात्र साठोत्तरी में लाये हैं, कट्टो, सुनीता, मृणाल, अथवा कल्याणी से भिन्न हैं । "अनन्तर " की " अपरा " मृणाल के समान एक जीवन्त पात्रा न होकर एक प्रयोग मात्रा रह जाती है, जिसका उपयोग जैनेन्द्र अपनी प्रयोग-शाला में विवाह और प्रेम की गुंत्थी को सुलझाने के लिए करते हैं । कैम्ब्रिज से साहित्य में डाक्टरेट प्राप्त अपरा विलायत में दाम्पत्य के आठ वर्ष निभाकर, तलाक जीतकर भारत आकर भारत के नैतिक वातावरण में वह अपना पुनर्विवाह अथवा पत्नीत्त्व की सम्भावना समाप्त देखती है । वह सुखदा, अनिता, मृणाल, सुनीता, भुवनमोहिनी जैसा कुछ उचित नहीं समझती यानी नारी स्वतंत्रता का विचार करके सही रास्ते पर जैनेन्द्रजी ने लाने का प्रयास किया है । उसी तरह अनन्तर अन्य नारी पात्रा वाली, वाग्मी, विदुषी कन्या अविवाहित रहने में स्त्री जीवन की सार्थकता देखते हैं । " अनामस्वामी " की अपरा भी परिवार टूटने से फिर वह विवाह के चक्कर में न जाकर आश्रम में जाना अधिक पसन्द करती है । " दशार्क " के नारी पात्रा रंजना, मेहन्दीबाई, मालती, सकीना, एक बार परिवार टूटने से फिर विवाह वगैरा न करके वे अलग ही

---

१ " मुक्तिबोध " जैनेन्द्रकुमार पृ. ७० ।

रास्तेपर आ जाती हैं । वह खुद ही नया प्रयोग शुरु करती हैं । जिस समाज ने उनकी यह हालत बनायी है, उनके साथ फिर समझौता करने के लिए वे तैयार नहीं हैं, चाहे वे फिर और संकट में क्यों न जाय, लेकिन निर्णय में परिवर्तन नहीं, मृणाल जैसा जीवन जीना नहीं चाहती, वे समाज को, परिवार के लोगों को विशेषतः पति को सबक सिखाना चाहती हैं ।

प्रेम और विवाह के अतिरिक्त " अन्तर " में अपरा और प्रसाद के माध्यम से स्त्री-पुरुष सम्बन्ध का एक और पक्ष लिया गया है । प्रसाद आबू में आयोजित सम्मेलन में भाग लेने के लिए आमंत्रित हैं । उनकी देखभाल के लिए उनकी पत्नी का साथ उन्हें अपेक्षित है, किन्तु पारिवारिक कारणों से पत्नी साथ जा नहीं सकती अतः उनके साथ अपरा को भेजने की व्यवस्था कर दी जाती है । अपरा रामेश्वरी के स्थान पर भेजी गयी है, अतः पत्नीवत व्यवहार करना अपना धर्म समझती है, अपने स्वार्थ के लिए नहीं, प्रसाद के लाभ के लिए । दोनों जिस कूपे से यात्रा कर रहे हैं, उसके बाहर अपरा के निर्देश पर "मिस्टर एण्ड मिसिज" लिखा गया हैं । इस से प्रसाद को अच्छा नहीं लगता । वह कहता है, " नहीं यह ठीक नहीं हैं । " किन्तु उसी क्षण अपरा उत्तर के रूप में उस शंका का समाधान भी प्रस्तुत कर दिया गया है, " क्या ठीक नहीं है ? मेरा स्त्री होना ठीक नहीं है ? या आपका पुरुष होना ठीक नहीं है ? या ऐसे होने पर दोनों का आसपास होना ठीक नहीं हैं ? मेरी जगह रामेश्वरी होती तो बेहद ठीक हो गया होता । व्हाट इज रांग इन मी ? " १

१, : " अन्तर " जैनेन्द्र पृ. २८ ।

" अनन्तर " में जिस तरह डर है, वह अपरा निकालती है, उसी प्रकार " मुक्तिबोध " में मि. सहाय भी डरते हैं, सामाजिक मर्यादाओं, और सांस्कारिक भाव - बोध के कारण इस नीलिमा के प्रेम सम्बन्ध से संकुचित होते है । पुरुष होते हुए भी सहाय इस ओर से सचेष्ट है, जब कि स्त्री होते हुए भी नीलिमा ऐसा भाव-संकोच से मुक्त है " १

वस्तुतः साठोत्तरी उपन्यासों में नीलिमा, अपरा के रूपमें जैनेन्द्रजी ने नारी-मुक्ति में विश्वास करने वाली नारियों की सृष्टि की है, जो सामाजिक बन्धनों का अस्वीकार कर प्रकृतिवादी जीवन दर्शन में विश्वास करती है ।

आरंभिक उपन्यासों में नारियों को इतनी स्वतंत्रता नहीं हैं । साठोत्तरी उपन्यासों में जैनेन्द्र विवाह के पश्चात पुरुष का पत्नी के अतिरिक्त अन्य स्त्री से तथा पत्नी का पति के अतिरिक्त अन्य पुरुष से सम्बन्ध बना रह सके इसलिए दोनों ओर से उदारता की अपेक्षा रखते हैं । जैनेन्द्रजी ने वैसा दिखाया है, मुक्तिबोध में नीलिमा और उसके पति के सम्बन्धों का विश्लेषण स्वयं नीलिमा के शब्दों में -
" तुम अपने को आझाद रखते हैं, और मैं इसमें उनकी सहायता करती हूँ । इसी में मेरी आजादी अपने आप बन आती है । अपने से पूछो, मेरी आजादी का श्रेय क्या तुम को दोगे, मुझे नहीं दोगे ! " २

---

१. " मुक्तिबोध ", जैनेन्द्र पृ. १२३ ।

२. " मुक्तिबोध " जैनेन्द्र पृ. ११९ ।

इसी प्रकार की उदारता सहाय की पत्नी राजश्री में भी है । वह नीला के पास अपने पति को भेजकर उसे खो देने के भय से आशंकित नहीं है, " जितना तुमको स्वतंत्र रख सकूँगी, उतने ही तुम मेरे होंगे। यह मैं अनुभव से जान गयी हूँ । " १ आरंभिक उपन्यास " व्यतीत " में अनिता, उदिता, चन्द्रकला अपने पति या प्रेमी के साथ और किसी को रहना उचित नहीं समझाती । उदिता और कुमार जब विदेशी यात्रा पर जाते हैं, तब कुमार चन्द्री को अपने साथ लेना चाहता है लेकिन उदिता का वह विचार नहीं है । वैसे ही चन्द्री का जयन्त के साथ विवाह होने पर अनिता जयन्त से मिलते देखकर दुःखी होती है । वैसी स्थिति साठोत्तरी उपन्यासों में अनन्तर, मुक्तिबोध में नहीं है ।

आरंभिक उपन्यास की नारियाँ कभी प्रेमी, कभी पति, समय समय पर करते हैं लेकिन " अनामस्वामी " की " उदिता " और कहीं न जाकर सीधे शंकर उपाध्याय के आश्रम चली जाती है ।

जैनेन्द्र का अन्तिम उपन्यास "दशार्क " में पारिवारिक समस्या के कारण जो परिवार की स्थिति बन गयी वह अलग है । प्रारंभिक उपन्यास में जो सुनीता, सुखदा, मृणाल, कल्याणी, अपने पति या बच्चे की चिन्ता करते हैं, उसी तरह " दशार्क " के नारी पात्र रंजना, मेहन्दी, सकिना, मालती किसी की पर्वा नहीं करते । उन्होंने पति को परिवार टूटने से बिलकुल छोड दिया और दोनों का रास्ता ही बदल गया । दशार्क की नायिका " रंजना " ने तो अपना बेटा आलोक और पति शेखर दोनों को छोडकर अलग रहती है । दशार्क में पारमिता

---

१ " मुक्तिबोध " - जैनेन्द्रकुमार पृ. ८१ ।

नामक नारी पात्रा तो समाज से विद्रोही बनकर क्रान्तिकारी बन गयी है, उसने तीन चार लोगों को भी मारा हैं । कल्याणी जैसे अपने शिशु के लिए जी रही थी । अन्याय सहते हुए, वैसे साठोत्तरी उपन्यासों की नारी पात्रा नहीं है, क्यों कि वे स्वातंत्रा विचार से रहना चाहती हैं, किसी की गुलामी में नहीं । आरंभिक और साठोत्तरी उपन्यासों में सिर्फ सामाजिक समस्या नारियों की बन गयी है, ऐसी नहीं । पुरूष पात्रा भी है, जो परिवार टूटने से कहीं गलत रास्तेपर हैं । " व्यतीत " में कलुआ पत्नी की मृत्युपर शराबी बनकर पुत्री बुधिया के शरीर का व्यापार करना चाहता है, पैसे के लिए, उसी तरह प्रेम कुंठीत जितेन विवर्त में रेल गिराता है, उसी प्रकार साठोत्तरी उपन्यास में, अनामस्वामी में शंकर उपाध्याय प्रेम कुण्ठा से पीडित होकर अपनी पत्नी की हत्या करते ही प्रेयसी का पति कुमार को षडयन्त्रा से लंबी बीमारी का इन्तजाम करता है, खुद आत्महत्या करने का प्रयास करता है । फिर प्रेयसी वसुन्धरा को भी जहर की सुई लगाकर हत्या करता है । दशार्क में स्मगलर माधवराव, कालीचरण क्रान्तिकारी पुरूष पात्रा हैं । यानी ये सभी पुरूष पात्रा समाज से अलग होकर समाज का अहित करना चाहते हैं । दशार्क में मिल मालिक है, वह शराब पीकर एक होटल में रंजना को पैसे माँगते वक्त बेहद मारता है, जिस से रंजना के बाल, वस्त्रा बिखर जाते हैं । रंजना जो वेश्या बनकर बन्द, हडताल के समय अपने बिरादरी के लिए सेठ मानेकलाल के पास पैसे माँगने जाती है, वह ठीक है, लेकिन उसे वेश्या क्यों बनना पडा यह सवाल विचारणीय है, उसका पति शेखर विश्वविद्यालय का गोल्डमेडी-लिस्ट है, वह लेक्चरर है, लेकिन जूए में हारने से शराबी बनता है, उससे उसके परिवार के हर एक की स्थिति कुछ अलग बन गयी । उसकी पत्नी रंजना को वेश्या बनना पडा ।

वह वेश्या बनने के बाद समाज के लोग, पुलीस अफसर, मंत्री के सचिव के सहायक, मिल मालिक, अखबार वाले, पत्रकार, सब लोग उसे परेशान करते हैं, उसे मारते हैं । वह यह व्यवसाय करती है, तभी कानून उसके खिलाफ आता है, व्यवसाय में दादालोग, दलाल, ये सब हैं, वे भी उसे दुःखी करते हैं । यानी यह सब प्रसंग या आपत्ति यें रंजना पर पारिवारिक समस्या के कारण ही आ गयी है ।

जैनेन्द्रजी ने साठोत्तरी और आरंभिक उपन्यासों में चित्रित जो पारिवारिक या सामाजिक समस्याएँ प्रस्तुत की हैं, उसमें स्वातंत्र्यपूर्व उपन्यास परख, सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी इसमें अलग दृष्टिसे सामाजिक समस्याएँ चित्रित की है । स्वातंत्र्योत्तर में और आरंभिक में आनेवाले उपन्यास सुखदा, विवर्त, व्यतित, जयवर्धन हैं, इसमें कुछ अलग दृष्टि अपनायी है, जैसे जयवर्धन में जय और इला का प्रेम है, मगर विवाह पूर्व वे एक साथ रहने से समस्या खडी हुई है, उसके पिता, आचार्य, स्वामी चिदानन्द, और विरोधी दल के लोग जयवर्धन के खिलाफ हैं ।

साठोत्तरी में मुक्तिबोध, अनन्तर, अनामस्वामी, दशार्क आते हैं । इसमें मुक्तिबोध मि. सहाय के उच्च राजकिय पद के त्यागपत्र देने के सम्बन्धी है । मुक्ति का यानी त्यागपत्र देकर मुक्ति पाना सिर्फ बोध है, उसके हितचिंतक त्यागपत्र देने के खिलाफ है । अनन्तर में प्रसाद तत्कालिन परिस्थितिसे दुविधा अवस्था में हैं । दोनों के लिए याने मि. सहाय और प्रसाद इन्हीं को प्रेयसीको आवश्यकता रहती है । मगर परिवार में कुछ समस्या खडी नहीं होती, बल्कि प्रेयसी को उनके

परिवार की हितैषिणी के रूप में देखाते है, अनिवार्य मानते हैं ।

जैनेन्द्र का दशार्क, भाषा, शैली, शिल्प, उद्देश्य की दृष्टि से अलग कृति है, उसमें पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक सभी समस्याएँ हैं । जैनेन्द्रजी ने नारी क्यों गलत रास्ते पर जाती है, उसका जिम्मेदार कौन है ? और जब वह गलत रास्ते पर जाकर वेश्या बनती तो, फिर उसका लाभ उठाने के लिए समाज तैयार है । साथ ही साथ समाज के सब लोग और सरकार के लोग सामाजिक मर्यादा या कानून को लेकर उसे गुनाहगार समझाते हैं । यह कहाँ तक ठीक है, और ऐसो वेश्या बनने का क्या कारण है ? अगर बन गयी तो उससे लाभ है, या हानी ? लाभ है, तो वह कैसा ? फिर उसके साथ समाज, सरकार और सरकारी अफसरों ने किस तरह बर्ताव करना चाहिए ? उसके हित के बारे में सोचना चाहिए या अहित के बारे में ? आदि तमाम बातों पर जैनेन्द्रजी ने अपनी कलाम चलाकर समाज परिवर्तन की अपेक्षा रखाते हैं । समाज परिवर्तन के लिए आरंभिक उपन्यासों में उन्होंने ऐसा नहीं किया क्यों कि उस समय शायद समाज में परिवर्तन के कारण कुछ असमंत स्थिति निर्माण हो सकती थी । इसलिए जैनेन्द्रजी ने ऐसी समस्याएँ साठोत्तरी उपन्यासों में ही चित्रित करना उचित समझा है ।

जैनेन्द्रजी ने आरंभिक उपन्यासों में चित्रित सामाजिक समस्याएँ और साठोत्तरी उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं में फर्क कुछ नहीं सिर्फ उसका परिणाम अधिक दिखानेका प्रयास और समाज सुधार की अपेक्षा से चित्रित समस्याएँ है ।

क] आर्थिक समस्या —

उपन्यासोंमें अर्थ-चिंतन की उपेक्षा करके जीवन का चित्रण जैनेन्द्र के लिए असंभव है। इसलिए उनके सभी उपन्यासों में प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूपसे आर्थिक समस्या का चित्रण आताही है। आरंभिक उपन्यास हो या साठोत्तरी उपन्यास हो, सभी समस्याएँ आर्थिक अभाव के कारण ही निर्माण हो जाती है। इसलिए आर्थिक अभाव का एकाध पात्र जैनेन्द्र जीने अपने उपन्यास में लाकर आर्थिक चिन्तन किया ही है।

"परख" में उपलब्ध जैनेन्द्र की आर्थिक चेतना से यह स्पष्ट हो जाती है। "कट्टो" निर्धन माता-पिता की पुत्री हैं। पिता की मृत्यु हो चुकी है। अकेली विधवा माँ के सहारे है। लेकीन उनकी आर्थिक स्थिती के कारण कुछ परिणाम नहीं दिखाया है। "कट्टो" की माँ की मृत्यु के पश्चात जब उपन्यासकार अपनी "रोटी" की समस्या का समाधान देते हैं। इतनी भाषा अम्मा के बाद मुझे रोटी भी दे ही होगी। जैनेन्द्रजीने "परख" में प्रत्यक्ष रूपसे "आर्थिक समस्या" कुछ बतया नहीं सिर्फ उपन्यास के अंत में बिहारी के माध्यमसे अर्थ सम्बन्धी चिन्तन जैनेन्द्रने किया है।" भिखारियों को बाँटू वह बढते हैं। किसानों को दूँ, वह इस पर आसरा जलने की आदत पड जाते हैं। जिसे देता हूँ, वही उसके चस्के में पड जाता है। और फिर परिश्रम से करता है और जी चुराता है। उद्योग चलाऊँ तो और रोग पीछे पडे जाते हैं।[२] यानी परख में पैसों का विरोध कर शारीरिक श्रम की प्रतिष्ठा जैनेन्द्र के आर्थिक चिन्तन का मूल बिन्दू है। इसी आधारपर भिखारियों में दान बाँटने को विरोध किया है। श्रम के अभाव में भिखारी को यदि पैसा मिलता है तो वह पैसा उसके लिए अहितकर हो होगा। शारीरिक श्रम को महत्व उद्योग अथवा मशीनों का विरोध जैनेन्द्र का "परख"

---

१. "परख" जैनेन्द्रकुमार पृ. ९१
२. "परख" -"- पृ. १२४

स्वातंत्र्य पूर्व का उपन्यास है। उस समय भारतीयों को श्रम का महत्व बतानाही उचित समझा क्यों कि उस समय भारत के लिए उद्योग और मशीनोंके मूल में स्वार्थ की वृति है। स्वातंत्र्य पूर्व की स्थिती के अनुसार ऐसा चित्राण है।

"सुनिता", त्यागपत्र और कल्याणी में नारी की आर्थिक दयनीयता का चित्राण है। यदी नारी आर्थिक दृष्टी से स्वावलंबी होती है तो पुरूष को उसकी करूणतम दशा करने का साहस न होता। इसके लिये समाज के जड़ सिद्धान्त, कानून स्वं अन्य मानदन्डों में परिवर्तन अनिवार्य है। स्वातंत्र्यपूर्व भारतीय समाज की आर्थिक करूणता का ही चित्र है। नारी धानोपार्जन करके या गृहकार्य में स्वाश्रयी बनकर परिवार तथा समाज की समृध्दि में सहयोग दे सकती हैं, तभी पुरूषवर्ग उस पर मनमाना अत्याचार नहीं कर सकता। श्रीकान्त की पत्नी सुनीता सुसंपन्न होते हुए भी नौकर को हटाकर गृहकार्य झाड़ना-बुहारना, चौका बर्तन स्वयं करती हैं।" [१] यानी डॉ. असरानीने कल्याणी के साथ विवाह सिर्फ पैसा पाने के लिए ही किया है। कल्याणी स्वं प्रीमियर के स्नेह - सम्बन्ध से वे प्रथम वर्ष पचास हजार और पाँच साल में ढाई लाख कमाना चाहते थे।[२] यानी अर्थ के लिए अनर्थ करने को तत्पर डॉ. असरानी है। तथापि पुरूष अपने तत्कालील सामाजिक आधिपत्य के कारण स्त्री के धान पर भी अपना अधिकार डॉ. असरानी की तरह समझाता था। " कानून हिन्दू स्त्री को हक नहीं देता। पैसे पर अधिकार मेरा है।" पतिव्रत्य और अर्थोपार्जन इन दोनों को डा. असरानी अपनी पत्नी में देखना चाहते थे। फलत: वे उसपर क्रूरतम कुत्याचार करते हैं। "सुनीता" में सुनीता के अतिरिक्त हरिप्रसन्न नामक एक क्रान्तिकारी पात्र आर्थिक

१. "सुनीता" जैनेन्द्रकुमार पृ. ७
२. "कल्याणी" जैनेन्द्रकुमार पृ. १०३

अभाव में जीवन बिता रहा है। स्वातंत्र्य प्राप्ति के लिए उसने अपना जीवन राष्ट्र कार्य को समर्पित किया है लेकिन उपजीविका के लिए उसे पैसे की भ्रान्त है। वह अपने मित्र श्रीकान्त के पास आकर उससे कहता है " मैं पहले कुछ रुपये तुमसे पाना चाहता हूँ।"[1] पैसे के लिए वह विकल हो गया है। पैसे के बिना उसका कोई काम चलता नहीं । कल्याणी और सुनिता में भी नारी से धन प्राप्ति करनेवाले पति हैं। उसी तरह "त्यागपत्र" के मृणाल की भी कुछ ऐसी ही स्थिती आर्थिक अभाव के कारण हुई है। मृणाल को तत्कालीन समाज में नारी को पुरुष पर ही अर्थ के लिए निर्भर रहना पडता था। परित्यक्ता होकर कोयलेवाले ने सहानुभूति जता कर मृणाल को अपनाया और मृणाल के आत्मसमर्पण पर उसके पोषण की जिम्मेदारी भी कुछ काल तक उसी पर निर्भर रही।

मृणाल को उसकी सहेली शीला का भाई डाक्टर, उसका प्रेमी उससे धोखा हुआ, फिर पति से निर्वासित और फिर कोयलेवाले के साथ कुछ दिन बिताना पडा। यानी हर समय मृणाल को गरीबी में ही जिन्दगी गुजारनी पडी। "मृणाल" अपनी गरीब स्थिति के कारण मृत्यु को भी ना चीज समझती है। मृत्यु से वह डरती भी नहीं और बचती भी नहीं। वह कहती है "भूख से मरना पडे तो मर भी जाऊँ। ऐसे जीने में क्या है ?"[2] गरीबी के कारण उसे दो वक्त की रोटी नहीं मिल सकती। ऐसी अवस्था में वह एक अस्पताल में बच्ची को जन्म देती है। जिस गरीबी में पेट में पलती, बढती रही वह अभावात्मक स्थिती के कारण जन्म से के कई दिनों के बाद मर गयी। उसकी मृत्यु का कारण भूख और बीमारी थी। "मृणाल" कहती है "दस महीने की होकर मर गई, रोग से मरी, कुछ भूख से मरी"[3]

---

१. "कल्याणी" जैनेन्द्रकुमार पृ. २९
२. "त्यागपत्र" जैनेन्द्रकुमार पृ. ६५
३. "त्यागपत्र" जैनेन्द्रकुमार पृ. ८३

यानी "मृणाल" को आर्थिक विपदा के कारण तन बेचना पडा, किसी दूसरे की रखैल होकर रहना पडा है। इतना ही नहीं अपने रक्त मांस के गोले को भी उसे गरीबी पर न्योछावर करना पडा है।

जैनेन्द्रकुमार के आरंभिक उपन्यासों में स्वातंत्र्यपूर्व उपन्यास परख, सुनीता, त्यागपत्र, और कल्याणी में तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक स्थिती के अनुसार आर्थिक समस्या थी। पुरूष धन के लिए स्त्री पर निर्भर था। वे स्वातंत्र्य के लिए क्रान्तिकारी बने थे उनको पैसे आवश्यकता थी। वे खुद कुछ काम वगैरे नहीं करते उसी के अनुसार आर्थिक समस्याएँ,जैनेन्द्रने चित्रित की हैं। स्वातंत्र्यात्तर में उपन्यास सुखदा, विवर्त, व्यतीत, जयवर्धन में भी आर्थिक समस्या बताने का प्रयास किया है। "सुखदा" में मध्यवर्ग की आर्थिक समस्या को उठाया गया है। जैनेन्द्र के आर्थिक चिन्तन के अध्ययन में इस दृष्टि से "सुखदा" का विशेष महत्व है। "सुखदा"का पति कान्त डेढ़ सौ मासिक आय वाला मध्यवर्गीय व्यक्ति है। मध्यवर्ग की सामान्य स्थिती के समान पिता तथा भाई-बहनों का दायित्व भी उसी पर है। सुखदा और कान्त को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पडता है। तंगी के कारण अन्तत: पति पत्नी में भी अनबन रहने लगती है। "गृहस्थी में बहुतसी बातों का अभाव दिखाई देने लगा। वेतन का कुछ भाग गांव में श्वसुर को भेजा जाता था, सो क्यों ? जेठ क्यों कुछ कमाने काम काम जल्दी नहीं करते हैं ? ननद की तबियत क्यों इधर लगी रहती है ? हम लोग कितनी तंगी में रहते हैं, फिर भी उन सब को रूपया पहुँचाया जाता है, यह बिलकुल ठीक

नहीं हैं। इन बातों को लेकर अनबन होने लगी।"[1] इस मध्यवर्गीय स्त्री की महत्वाकांक्षा उसे धनिक वर्ग की स्पर्धा में डाल देती है।"[2] और इस प्रकार उसकी समस्याएँ और बढ जाती है। सुखदा अपनी इस स्पर्धा-त्मक वृत्ति को ही अपने पतन का कारण मानते हुए पश्चाताप करती है। समस्या का कारण धन का मूल्य और महत्व है।

आर्थिक समस्या के कारण वह पति को छोडकर मि. लाल जो क्रान्तिकारी है उसके पास जाकर रहती है, वह भी छोड देता है, वह इस समय क्षय रोग से पीडित होकर अस्पताल में है। मानसिक रोग के कारण - शारीरिक रोग से पिडीत हुई है। इस पीडाको वह प्रायश्चित के रूप में स्विकार करती है " अस्पताल में हूँ, अकेली हूँ। बस एक नौकर साथ है। बच्चे हैं, स्वामी हैं पर सब दूर हैं। उनकी याद करते डर होता हैं। किस मुँह से याद करूँ ? उन्हें अपने ही हाथों मैं ने हटा कर दूर किया है, अपने ही हाथों मैं ने अपना अभाग्य बनाया है। कभी मेरी सोने की गृहस्थी थी, अब ठौर का ठिकाना नहीं है। सब उजड चुका है, और अपने ही कार्यों से मैं ने उजाडा है। आज यद्यपि मैं जानती हूँ, कि मुझे छोड और कुछ भी नहीं बिगडा हैं, वह गृहस्थी लहलहाती हुई आज भी जुड सकती है, पर हाय! मैं उसी के योग्य होती ..... तो।"[3]

"सुखदा" में जैनेन्द्र ने सुखदा की गृहस्थी का उजाडने का कारण आर्थिक समस्या ही बताया है, लेकिन सुखदा इस परिस्थितिसे समझौता नहीं करनेसे उसका क्या हाल हो गया यह भी बतानेका प्रयास बहुत

---

१. "सुखदा" जैनेन्द्रकुमार पृ. १०
२. "सुखदा" जैनेन्द्रकुमार पृ. ११
३. "सुखदा" जैनेन्द्रकुमार पृ. ७

उचित ढंगसे किया है जो मध्यवर्ग के लोगों के लिए एक आदर्श के रूप में पेश किया है। सुखादा में सुखादा के अलावा मि. लाल, हरिश जो क्रान्तिकारी लोग हैं उनकी भी स्थिती आर्थिक अभाव से दयनीय हो गयी है। "सुखादा" का पूरा चित्रण आर्थिक समस्या का ही है।

"विवर्त" में आर्थिक रूप से असमान प्रेमी-युगल के माध्यम से आर्थिक वैषम्य की समस्या को उठाया गया है। जितने गरीब है, गरीबी के कारण उसके मन में कुछ ग्रंथियाँ हैं, जिस से अपनी प्रेमिका भुवन मोहिनी उसे "अमीरजादी" और पिता"मुफ्तखोर" लगने लगते हैं। मोहिनी को यह अपने व्यक्तित्व और परिवार का अवमान प्रतीत होता है। दोनों में वैमन्यस्य उत्पन्न होता है, और प्रेम की परिणति विवाह में संभव नहीं हो पाती। प्रति किया स्वरूप प्रतिशोध के लिए "जितेन" क्रान्तिकारी बन जाता है। मोहिनी का विवाह अत्यन्त संपन्न वकील नरेश के साथ हो जाता है। दोनों के बीच की खाई इस प्रकार और बढ़ जाती है। जैनेन्द्रजीने जितेन और मोहिनी के से दोनों वर्गों के दृष्टिकोण को स्पष्ट किया है।

आर्थिक असमानता के कारण जितेन और भुवन मोहिनी दोनों एक दूसरे के खिलाफ "पैसा" कम या जादा इसी के कारण एक दूसरे पर दोषारोप करते हैं उस में उनका दोष नहीं हैं। भुवन मोहिनी की उक्तियाँ इस संदर्भमें "मैंने जाकर किसी से पूछा कि तुम अमीर क्यों नहीं हो ? ऐसे ही कोई हमसे भी नहीं पूछ सकता कि हम क्यों अमीर हैं। जाकर पूछो भगवान से, जाकर पूछो कानून से। अपनी अपनी पसंद हैं जिसे नहीं पसन्द है, गरीबी, वह अमीर बनना चाहने को स्वतंत्र हैं,

जिस अमीरी नहीं चाहिए वह आज़ाद है, कि अमीर न बने।...."[1]

जितेन भुवन मोहिनी के प्रति अनुराग होने पर वह अपनी गरीबी और उसकी अमीरी के भेद को नहीं भूलता है। धनाभाव के कारण वह हीन भावना से पीडीत है, लेकिन कुछ नहीं कर सकता, वह भुवन मोहिनी से कहता है "तुम ठहरी अमीरजादी। मैं मेहनत करके खाता हूँ। पाई-पाई पसीने के बल पर मुझे कमानी पडती है। फिर हमारे बीच यह क्या हो गया है। सोच लो मोहिनी, कहीं तुम से भूल तो नहीं हो गयी है।"[2]

आर्थिक विषमता की बात को भुवन मोहिनी के सम्मुख रखकर अपने प्रति उसके प्रेम को परीक्षण की मुट्ठी में झोंक देता है इस अप्रत्याशित प्रेम परीक्षण से भुवन मोहिनी तीखी पड जाती हैं। वह जितेन के शंकालु मन पर आक्षेप करती है, वह कहती है, "खोलकर साफ क्यों नहीं कहते कि तुम मेहनत का खाते हो, हम हराम का खाते हैं।.... जानती हूँ तुम विवाह नहीं चाहते प्रेम चाहते हो, लेकिन प्रेम भी नहीं चाहते। यह प्रेम है, जो मुझ में मुझ को नहीं देखता अमीरजादी को देखता है। यह प्रेम है, जो तुम्हारी आँखों को मेरे अलावा मोटर और बंगला देखने के लिए खाली छोड देता है। आई थी कि चली चलूँगी, सामने देखूँगी, पीछे पर ध्यान न दूँगी। पर क्या करूँ। मोटर, बंगले तुम्हें चुभाते हैं। कहीं तुम उन्हें ही तो नहीं चाहते हो,

---

१. "विवर्त" जैनेन्द्रकुमार पृ. १९
२. "विवर्त" जैनेन्द्रकुमार पृ. २१

नहीं तो, भूल क्यों नहीं पाते, शायद उन्हीं के लिए मुझे चाहते है।"[१]

यानी आर्थिक अभाव से परिवार तो टूटता है, लेकिन "विवर्त" में जैनेन्द्रजीने जितेन और मोहिनी के [illegible] माध्यम से [illegible] विवाह आर्थिक असमानता न होता नहीं यह बताया है। [illegible] उसी तरह "विवर्त" में और एक नारी पात्रा है तिन्नी, उसकोजितेन ने पाप की दुनिया वेश्या-वृत्ति से पचास रूपये में खरीदा है। शायद यह सब पैसे के अभाव के कारण ही हुआ है। जैनेन्द्र कुमार जीका आर्थिक अभाव और फिर प्रेमी प्रेम कुण्ठा से पीडित होकर क्रान्तिकारी वगैरा बनकर रात पंजाब मेल गिराकर तिसेसठ लोग मारने और दो सौ पन्द्रह लोग घायल करनेवाला पात्रा पहला ही है। "विवर्त" यह ऐसा प्रसंग दिखाने वाला पहला ही उपन्यास है, जिसमें समाज के वर्ग और उसके बुरे परिणाम दिखाने का उचित प्रयोग किया है।

"व्यतीत" के आर्थिक चिन्तन का विश्लेषाण स्पष्ट कर देता है कि जैनेन्द्र का चिन्तन प्रतिगामी है। "परख" के ही सामान इसमें भी यह धारणा व्यवक्त की गयी है कि कुछ लोगों का सुख धन वैभव में हैं तथा कुछ का सामाजिक कल्याण के लिए स्वयं को प्रयोग बनानेमें नायक जयन्त रूपये पैसे की ओर से उदासीन है। उसका सम्बन्ध उस समृध्द समाज हसे हैं जहाँ बिना धन के कोई सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं है। उसके पिता "सह-संपादक" के पद के प्रति अत्यन्त उपेक्षा पूर्ण भावसे कहते हैं, "पिछत्तर रूपये की क्लर्की करोगे।"[2] किन्तु जयन्त अपने सम्पन्न परिवार को छोड वह क्लर्की ही स्वीकार कर लेता है। पिता की मृत्यु के पश्चात्

१. "विवर्त" जैनेन्द्रकुमार पृ. १४, १५
२. "व्यतीत" जैनेन्द्रकुमार पृ. ११

उनकी सम्पति से मिला अपने भाग का ढाई हजार भी अपने बहन को देता है।"[1] "व्यतीत" का नायक जयन्त आर्थिक समस्या से ग्रस्त है, उसको सुखादा के कान्त के सामान घर के तरफ देखना पडता है, पैसे की आय भी कम है, यानी जिस तरह सुखादा में कान्त का परिवार टूटा था, उसी तरह जयन्त का नहीं हुआ, लेकिन इतना जरूर हुआ है कि वह प्रेम करता था, अनितासे विवाह भी करना चाहता था, लेकिन उस की सगाई और हो जाने के बाद जयन्त को उसकी प्रेयसी अनिता को उपहार स्वमें दिए हुए सोने की चैन जयन्त को लौटा देती है। जयंत चैन के लौटाने के अपना प्रेम असफल समझाता है। इससे उसके प्रणयी हृदय का तिरस्कार होता है, और यही बात उसके मन में इतनी गहरी बैठ जाती कि अब स्त्री-पात्रा के लिए मानो विरक्ति हो गयी है। उसकी सारी महत्व - कांक्षाएँ धूल में मिल गई हैं। उसकी शादी चन्द्रीकला से होती मगर उस मेंवह अशान्त ही रहता है। यानी आर्थीक विवंचना से उसके मन में स्त्री जाति से नफरत की भावना निर्माण हो गयी है। जयन्त फौज में भरती होता है, युध्द में घायल होने के बाद पत्नी मिलने जाती है अस्पताल में,लेकिन उससे मिलने से जयन्त नफरत करता है, मगर अनिता को मिलने के लिए उत्सुक है जब अनिता उनके साथ आत्म समर्पण करती तब खुश हो जाता है।

गरीबी के कारण जयन्त के परिवार की स्थिति जैसी दयनीय है, उसका असर जयन्त पर हुआ अपनी प्रेयसी को भूलना पडा है, उससे वह हमेशा दु:खी रहता है यह जैसा आर्थिक अभाव का कारण है, उसी तरह "व्यतीत" में जैनेन्द्र ने "कलुआ" का प्रसंग दिखाया है।

---

१. "व्यतीत" जैनेन्द्र कुमार पृ. २३

कलुआ विधुर मजदूर है और अपनी इकलौती बेटी के साथ रहता है। वह अठारह वर्षीय युवती है। पत्नी की मृत्यु के बाद कलुआ आवारा हो जाता है। वह अपना गम भुलाने के लिए ताडी पीता है। ताडी पीने के लिए लोगों से उधार पैसे लेता है। उधारी लौटाने के बदले वह अपनी पुत्री बुधिया के शरीर का व्यापार करना शुरू कर देता है। यानी कलुआ शराबी और उसके कारण बुधिया वेश्या बन गयी है। जब बुधिया वेश्या व्यवसाय करने से इन्कार कर देती है तो, उसे वह पीटता है। बुधिया इस तरह वेश्या हो गयी है। वह कहती है, "लेकिन दादा शकल देखते ही मुझे मारने लग जाते हैं। ठीक है, मुझे ही न मारें तो जाएँ कहाँ ? कहकर उसने अपनी पीठ दिखायी जहाँ चोट के निशान थे।"[१] जैनेन्द्र ने अपने उपन्यासों में ऐसे बहुत प्रसंग लाये हैं कि जो पैसे के अभाव में पुत्री को खोना या पुत्री बेचना यह बुरा कृत्य किया है। "मृणाल" की दस महिने की बच्ची के गरीबीके कारण दूध नहीं मिलता, दवा नहीं मिलती इसलिए वह मर जाती है। "व्यतीत" का कलुआ अपनी लडकी बुधिया को अर्थ प्राप्ति के लिए वेश्या व्यवसाय में लगा देता है।

"विवर्त" में "तिन्नी" का पिता तो तिन्नी को ही बेच डालता है। यानी एक माँ पुत्री के मृत्यु को पैसे के अभाव में देख लेती है। एक बाप है, जो लडकी को मार पीट करके उसे वेश्या व्यवसाय में ढकेल देता है। तो एक बाप लडकी को ही बेच देता है, यह सब आर्थिक अभाव के कारण ही हुआ है।

जैनेन्द्र कुमार के आरंभिक उपन्यास अन्तिम तथा स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास में "जयवर्धन" यह अन्तिम उपन्यास है। उस में आर्थिक चिन्तन कथा अंग बनकर नहीं, सर्वथा स्वतंत्र विचार-बिन्दुओं के रूपमें आया है। इसमें जयवर्धन, स्वामी चिरानन्द, आचार्य इन्हीं के माध्यम से

१. "व्यतीत" जैनेन्द्रकुमार पृ. २६

जैनेन्द्रने श्रम को महत्व दिया है, मशीनों के प्रयोग को स्पष्ट विरोध किया है। आचार्य कहते हैं "उद्योग कहते हो, प्रमोद क्यों नहीं कहते ? आलस्य क्यों नहीं कहते ? उद्योग मशीनपर डालकर खुद उद्यम से बचने का ही तो वह बहाना है। फुर्सत चाहिए, यह क्यों नहीं कहते कि मौत चाहिए।"[1] यानी यहाँ जैनेन्द्र का विचार है कि मशीनोंकि महत्व से मनुष्य के श्रम का मूल्य घटता है। मशीनों से यदि कार्य की गति त्वरित होती है, तो मनुष्य को अवकाश अधिक मिलता हैं, जो निष्क्रियता बढ़ता है। निष्क्रियता अथवा आलस्य मनुष्य को मृत्यु की ओर ले जाने में ही योग देता है। इन तर्कों के आधारपर "आचार्य" द्वारा उद्योगीकरण का विरोध कर स्वामी चिदानन्द का समर्थन भी इसी पक्षमें हैं, "मशीनी नहीं मानवीय सभ्यता हम चाहते हैं।"[2] इन तमाम बातों से जैनेन्द्र जीका विचार हैं कि आद्योगीकरण और भारत स्वातंत्र्य के बाद यहाँ के सब लोग मशीनोंपर निर्भर रहकर आलसी बन गये हैं साथ ही साथ आधुनिकीकरण का असर समाजपर ही बहुत गहरा पडा है। जिससे मानवीय सभ्यता खत्म हो चुकी है, यहाँ की सामाजिक मर्यादा, भारतीय संस्कृतिका -हास हो गया है। "जयवर्धन" में यही विचार प्रधान रहे हैं, आर्थिक अभाव से परिवार टूटना, या प्रेयसी प्रेमी से दूर जाना वगैरा कुछ नहीं सिर्फ "आर्थिक" विषय पर ही महत्वपूर्ण चर्चा प्रस्तुत की हैं।

---

१. "जयवर्धन" "जैनेन्द्र कुमार" पृ. २२६
२. "जयवर्धन" "जैनेन्द्र कुमार" पृ. ७४

जैनेन्द्र के आरंभिक उपन्यासों में स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास आते हैं, इसी के कारण उपन्यास में आर्थिक समस्याएँ तत्कालिन समय के अनुसार ही चित्रित की हैं । जैसे कि परिवार में आर्थिक अभाव से परिवार टूटना । जैसे मृणाल [त्यागपत्र] कल्याणी [कल्याणी] सुनीता [सुनीता] सुखदा [सुखदा] भुवनमोहिनी [विवर्त] अनिता [व्यतीत] आदि । यानी आर्थिक विषमता के कारण उनका विवाह न हो सका है । या विवाह होकर आर्थिक अभाव से परिवार टूटा है । परिवार के घटक को गरीबी के कारण खोना पडा है । साथ ही साथ उसको बिकना भी पडा हैं, वेश्या व्यवसाय में ।

विवर्त का "जितेन" आर्थिक वैषम्य के कारण उस का विवाह प्रेयसी के साथ नहीं होता, इसलिए वह क्रान्तिकारी बनकर रात में पंजाब मेल गिराकर तिरसठ आदमी मारता हैं, और दो सौ पन्द्रह घायल करता है । जितेन के आर्थिक अभाव के कारण मोहिनी की शादी नरेशचन्द्र से होती है, इसलिए जितेन यह सब कयामत खडी कर देता है । साथ ही साथ कलुआ अपनी पुत्री " बुधिया " को पैसे के कारण गलत रास्ते पर भेजता है, तिन्नी के पिता तो तिन्नी को बेचकर ही अपना काम पूरा कर देता है । मृणाल को तो कहाँ कहाँ जाना पडा है, क्या क्या करना पडा यह बताने की आवश्यकता ही नहीं उसने अपना तन ही कोयलेवाले को दे दिया उसकी बच्ची " भूख " के कारण मर गयी । " परख " का सत्यधन बाल विधवा "कट्टो" के साथ प्रेम करता है, लेकिन वकील भागवत दयाल ने अपनी लडकी " गरिमा " के साथ सत्यधन का विवाह होने के लिए पैसे की अभिलाषा दिखाने कारण सत्यधन कट्टो के साथ विवाह न कर के गरिमा के साथ ही विवाह करता है ।

बादमें वकील भागवत दयाल अपनी जायदाद अपना लड़का बिहारी के नाम पर ही करता है । यानी पैसे का लालच कितना बुरा है, यह जैनेन्द्रजी ने "परख" में दिखाया है ।

" सुखादा " का पति कान्त की डेड सौ रुपये मासिक आय है । लेकिन उसकी पत्नी बड़े घर की बेटी रहने के कारण उसको यह दयनीय जीवन जीना अच्छा नहीं लगता । वह पति को छोडकर मि. लाल क्रान्तिकारी के साथ रहती, फिर बुरी आपत्ती में फँसती है ।

जैनेन्द्र के आरंभिक सभी उपन्यासों में ये आर्थिक समस्याएँ हैं, और साठोत्तरी उपन्यासों में नहीं हैं, ऐसी बात नहीं, जैनेन्द्र के हर एक उपन्यासों में आर्थिक चिन्तन है ही । उसके बिना उनका उपन्यास पूरा नहीं होता । मगर स्वातंत्र्या के बाद यानी साठोत्तरी उपन्यासों में आर्थिक समस्याओं के कारण और परिणाम बहुत गंभीर बताये हैं । उसका कारण औद्योगिकरण और पाश्चात्य अन्धानुकरण है, जैसे " अनामस्वामी " में " उदिता " पैसे के अभाव में विलायत में जाकर एक समय दो-दो आदमी के साथ प्रेम सम्बन्ध रखकर गर्भवती बनने पर फँस जाती है ।

उसी के अनुसार " दशार्क " को नायिका जो एम. ए. एल. एल. बी. है, पति कॉलिज में लैक्चरर हैं, मगर जब पति जुआरी बनता है, शराबी बनता है, तब उसकी पत्नी रंजना घर छोडकर चली जाती है, और सीधे वह वेश्या बनती है । रंजना अपना पति शेखर और पुत्र आलोक इनकी भी चिन्ता नहीं करती । दशार्क में मेहन्दीबाई, सकिना, मालती, आदि नारियाँ भी पैसे के अभाव से परिवार टूटने के कारण वेश्याएँ बन जाती हैं ।

इस व्यवसाय में उन्हें समाज ने ही लाया है, और उसका कारण आर्थिक है । " दशार्क " में " पारमिता " क्रान्तिकारी बन गयी है । लेकिन वह पैसे के लिए मानेकलाल सेठ की पत्नी मधुरिमा के पास आती है, जैसे " सुनीता " में हरिप्रसन्न, क्रान्तिकारी पैसे के लिए श्रीकान्त के पास आता है । [विवर्त] में मि. लाल, हरिश, क्रान्तिकारी हैं, पैसे के लिए सुखादा और कान्त के पास आते हैं, उसी प्रकार पारमिता की भी आर्थिक समस्या है । दशार्क में माधवराव स्मगलर बन गया है । कालीचरण क्रान्तिकारी नहीं बना लेकिन विद्रोही बनकर समाज का अहित चाहता है ।

जब रंजना, वेश्या बनती है, तब पैसे मांगने पुलिस अफसर जातें है । समाज सेवा करने वाले महिला मंडल की अध्यक्षा शेफालिका पाँच हजार रुपये रंजना से लेती है । " बेला " नामक एक लडकी की दहेज के लिए तीन हजार रुपये की समस्या निर्माण हो गयी है, उसकी शादी उसके बगैर नहीं हो सकती तभी रंजना पैसे देती है । यानी आरंभिक और साठोत्तरी उपन्यासों में आर्थिक समस्याएँ जैनेन्द्र ने बहुत उचित ढंग से बताने का प्रयास किया है ।

जैनेन्द्रकुमार के आरंभिक उपन्यास तथा साठोत्तरी उपन्यासों में अनामस्वामी " दशार्क " में जिस तरह आर्थिक अभाव के कारण समस्याएँ निर्माण होने से उसका असर उस परिवार और पर्याय से समाज पर हुआ है, उसी प्रकार साठोत्तरी उपन्यासों " मुक्तिबोध " और " अनन्तर " में भी चित्रित किया है । " मुक्तिबोध"का नायक मि. सहाय राजनीतिक व्यक्ति है । वय के साथ पद, प्रतिष्ठा तथा पैसे से विरक्ति तथा श्रम, सादगी और अपरिग्रह के प्रति आसक्ति का

भाव उसके मन में वृध्दि पाने लगा है, इसलिए सहाय मंत्री पद के दायित्वों और अधिकारों से मुक्त हो गांव में रहकर कृषि द्वारा जीवन यापन का "सुख" प्राप्त करना चाहते हैं, लेकिन आर्थिक स्वार्थ के कारण परिवार के सब सदस्य, लड़की, दामाद, मित्र, हितचिन्तक भी इस निर्णय के खिलाफ हैं । राजनीतिक पद के साथ पैसे का प्रश्न जुड़ा है । पैसे के कारण ही सहाय का पुत्र विरेश्वर का जीवन लक्ष्यहीन दिशा में बह रहा है । विवाहित पुत्री अपने पति के हाथ की कठपुतली बनी वह पैसे से बढ़कर किसी वस्तु को नहीं मानती है । उच्च पद पर विराजमान हुए, पचपन वर्ष के सहाय नीलिमा नामक पैंतीस वर्षीय युवती के प्रति आकर्षित है, नीलिमा सम्भ्रान्त महिला है । वे दोनों एक दूसरे से प्रेम करते हैं, किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण यह प्रणय-सम्बन्ध विवाह में परिणत नहीं हो सका है । सहाय का विवाह अन्यत्र होने पर भी एक दूसरे से प्रेम करते हैं । सहाय की दुविधा का कारण उसका असफल गृहस्थ जीवन है ।

सहाय जिस तरह प्रेयसी की अनिवार्यता चाहते हैं, उसी प्रकार सहाय की पत्नी ठाकुर महादेवसिंह से प्रेम सम्बन्ध रखती है, लेकिन सहाय उसमें बाधक नहीं बनता । फिर भी इस घटना से उनके मन में हीन भावना उत्पन्न हो जाती है । वे कहते हैं " मैं ठाकुर को देखता रह गया । राजश्री को लेकर उनमें कितनी दृढ़ता हो जाती है । मैं प्रशंसा कर सकता हूँ, उस भाव की । प्रशंसा कर सकता हूँ राजश्री की भी जिसने यह बल ठाकुर को दिया है । लेकिन उन दोनों के बीच क्यों मैं तिसरा ही होने लायक था । " १ आरंभिक उपन्यासों में जैनेन्द्रजी ने परिवार टूटने का

---

१. " मुक्तिबोध " जैनेन्द्रकुमार " पृ. ४५ ।

चित्र प्रस्तुत किया है, लेकिन उसका कारण आर्थिक अभाव है, लेकिन साठोत्तरी का " मुक्तिबोध " उपन्यास में आर्थिक अतिरेक के कारण ही परिवार में यह स्थिति निर्माण हो गयी है, सहाय एक मंत्री पद पर है, तो पैसों की कमी नहीं है, सहाय, राजश्री, पुत्र विरेश्वर, पुत्री अंजलि सभी अपने अपने अलग रास्तेपर है, जिसका कारण जादा पैसा यही है। सहाय विवाहित होते हुए भी नीलिमा से प्रेम करते हैं। इसी कारण वह अपनी पत्नी राजश्री को स्वतंत्रता प्रदान करते हैं। वे नीला के प्रति अपने मांसल प्रेम को इन शब्दों में स्वीकारं करते है, " देहमें भरती आती हुई नीला पहले से अच्छी लग रही है। जरा बाँह को दबाकर देखूँ, पूछूँ कि नीलिमा तुमपर से उम्र क्या कपूर की तरह आकर उड़ जाती है ? सिर्फ सुगन्ध छोड जाती है। सच्च जिस्म तुम्हारा गदराया जा रहा है। " १

" अनन्तर " में जैनेन्द्र ने आर्थिक रूप से अत्यन्त समृध्द समाज की कहानी कही हैं। भारतीय समाज के इस अल्प वर्ग की बात कहते हुए जैनेन्द्र इस तथ्य के प्रति सजग हैं, कि भारत की बहुसंख्या जनता की यथार्थ आर्थिक स्थिति - भूख और गरीबी का परिचय इसमें नहीं है।" 2 " अनन्तर " में चित्रित वर्ग, धानिक वर्ग ही नहीं, वह धन को शक्ति से पूर्ण तथा परिचित भी है। धन के व्यय-अपव्यय की चिन्ता उनके लिए आवश्यक नहीं है, क्योंकि वे जानते हैं, कि, " बरबादी के सिवा रुपया कभी और कुछ नहीं होता। " 3

---

१. " मुक्तिबोध " जैनेन्द्रकुमार पृ. ५२।
२. " अनन्तर " " पृ. १४७।
३. " अनन्तर " " पृ. १४।

जैनेन्द्रजी ने "अनन्तर" में पैसों की अनिवार्यता चाहते हैं, लेकिन इस पैसे का सदुपयोग भी करने की अपेक्षा रखते हैं । वे कहते हैं, " पैसा समाज के शरीर का प्रवाही रक्त है । वह है, क्यों, कि, उस पर सरकारी मुहर है । मोहर की वजह से कोरा कागज भी कितनी कीमतका हो जाता है । ।"[1] धनकी आवश्यकता हर मनुष्य को उचित जीने के लिए है । लेकिन धनकी इसी शक्ति के कारण पारस्पारिक व्यक्तिगत सम्बन्ध भी धन के आधार पर बनते और बिगडते हैं । ।"[2] धन के प्रति हमारी कामना उसका गौरव और बढा देती है । और धनवान इसी गर्व से धनाकांक्षी को हीन दृष्टि से देख सकता है । जैनेन्द्र के अनुसार धनी का यह गर्व और अहंकार स्वत्व की भावना तो अनुचित है, ही धनाभाव में हीन भाव भी उपयुक्त नहीं है । यानी धन के अभाव और अतिरिक्ता के कारण भी बुरे परिणाम समाजपर होते हैं ।

स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में आर्थिक अभाव के कारण आर्थिक समस्याएँ थी । उसका असर, परिवार, समाज पर जरूर होता था, लेकिन साठोत्तर में लोग ज्यादा पैसे की प्राप्ति के कारण समाज में पैसे का केन्द्रीकरण हो गया । और इस का दुष्परिणाम समाज पर ही होता रहा । इसलिए जैनेन्द्रकुमारजी ने आरंभिक उपन्यासों में पैसे की प्राप्ति के लिए नारियों से परिश्रम कराना और पुरूषों ने आलस्य में रहना उचित नहीं हैं, यह सूचित किया हैं, इसलिए उस काल की

---

1. "अनन्तर " जैनेन्द्रकुमार पृ. १०१ ।
2. " " १४ ।

आर्थिक समस्याएँ अलग और साठोत्तरी में आर्थिक समस्या अलग है । समाज में दुष्परिणाम दिखाई देने लगे । तब साठोत्तरी उपन्यासों में जैनेन्द्रजी ने "अनन्तर" में आर्थिक समृध्दि में मानव समाज की उन्नति नहीं हैं, वास्तविक उन्नति तो नैतिक है । अतः हमे अर्थ और नीति का समन्वय करके चलना चाहिए यह बताया है । "अनन्तर" में जैनेन्द्र ने गांधी के त्याग और सरलता की प्रशंसा करते हुए स्वाधीन भारत में हुआी भौतिक आर्थिक समृध्दि को उन्नति माननेवाले चिन्तन पर व्यंग करते हुए कुछ संकेत दिये हैं । उनका कहना है, " आर्थिक और नैतिक उन्नति में वरीयता नैतिक उन्नति को ही देनी होगी। "आर्थिक की जगह नैतिक को ही ध्यान और ध्येय में लिया जाय।"1

जैनेन्द्रकुमार के आरंभिक उपन्यासों में चित्रित आर्थिक समस्याएँ तथा साठोत्तरी उपन्यासों मे आर्थिक समस्याएँ, समय, देश की स्थिति, समाज की स्थिति किस प्रकार की है, यह देखकर ही किया है, यह सिध्द होता है । स्वतन्त्र्य भारत में आज की समस्याएँ देखने का प्रयास किया गया, तो समाज में आर्थिक परिस्थिति के कारण तीन वर्ग बन गये हैं, निम्नवर्ग, मध्यवर्ग, और उच्चवर्ग । इसमें निम्न वर्ग की स्थिति बहुत दयनीय हैं । उनको रोटी, कपडा और मकान की आवश्यकता सरकार पूरी नहीं कर पाती । निम्नवर्ग के लोगों ने सिर्फ मनुष्य के शरीर का रूप हो लिया है, नहीं तो वे पशू से भी गये बीते हैं । पशु की तरह कहीं पेड का, फुटपाथ का सहारा लेते हैं, कपडे पहनने को नहीं हैं । यह जो स्थिति आज भारत स्वतंत्र होकर भी बन गयी है, इस का क्या कारण है, यह सोचने का प्रयास किया तो

---

१. "अनन्तर " जैनेन्द्रकुमार " पृ. ११५ ।

पैसे का केन्द्रीकरण हुआ है । काला पैसा बहुत तैयार हो गया हैं । बेकारी की समस्या, राजनीतिक समस्या, रिश्वतखोरी, गुनहगारवृत्ति आदि सभी समस्याओं का कारण आर्थिक ही है । और यही सभी समस्याएँ आज यानी स्वातंत्र्योत्तर काल में निर्माण होने के कारण जैनेन्द्रजी ने अपने साठोत्तरी उपन्यासों में आर्थिक समस्याएँ अलग ढंग से खडी की है ।

"मुक्तिबोध" और "अनन्तर" दोनों उपन्यासों को देखा गया तो बहुत कुछ साम्य दिखाई देता है । "मुक्तिबोध" के श्री. सहाय यौवन वर्ष के है और "अनन्तर" के प्रसाद बासठ पार कर गये हैं । दोनों उपन्यासों में पत्नी पति को संसार से विमुख और लोक सेवा की ओर उन्मुख पाति है । पुत्र पिता को असफल, अयोग्य और असमर्थ मानता है । श्री सहाय के एक पुत्री [अंजलि] और एक पुत्र [विरेश्वर] है । श्री प्रसाद के भी एक पुत्री [चारू] और एक पुत्र [प्रकाश] है । उपन्यास के एक पात्र का काम पिता-पुत्र में मेल कराना है । "मुक्तिबोध" में नीलिमा विरेश्वर को तमाचा मारकर ठीक करती है, और "अनन्तर" में गुरु आनन्दमाधव प्रकाश को झिडककर ठीक करते हैं ।

दोनों उपन्यासों के नायक विरागी बनते हैं, किन्तु व्यवहार में दुर्बल अनुरागी है । दोनों को कुछ लोग नेता मानते है । किन्तु नैतिक और बौध्दिक दृष्टियों से दूसरों की सहायता की अपेक्षा रखते हैं । सहाय को सहायता नीलिमा करतो है, और प्रसाद की अपरा । दोनों पात्रों के एक पत्नो और एक प्रेमिका है । सहाय की प्रेमिका श्रीमती नीलिमादेवी और प्रसाद को सेविका श्रीमती अपरा । दोनों उपन्यासों में जमाता का पद धनी व्यापारी-वर्ग के व्यक्ति को मिला है ।

चारु के पति, आदित्य कुशल उद्योग पति हैं । और अंजलि के पति कुँवर साहब चलते पुर्जे व्यापारी हैं । दोनों के पास विदेश से सम्बन्धित प्रेमिकाएँ हैं । आदित्य के साथ अमरा रहती है । और कुँवर साहब को तमारा घेरे रहती है ।

सहाय अच्छे उपदेशक हैं, और प्रसाद से गवर्नरतक सलाह लेते हैं । लेकिन इन दोनों को अगर पत्नी, प्रेमिका और मित्र का सहारा न मिले तो ये इस कठोर धरतीपर खडे नहीं हो सकते हैं । ये दोनों केवल बात करने के लिए बने हैं, काम करने के लिए नहीं । इन दोनों उपन्यासों के द्वारा जो चित्र दिखाई देता है, इस का प्रधान कारण आर्थिक अतिरेक ही है । इन नायकों के पुत्र लक्ष्यहीन बने इतना ही नहीं । पिता को असमर्थ मानते है यह उनका दोष है, ऐसा कहना गलत है, क्यों, कि पिता को भी इस आयु में प्रेयसी की आवश्यकता है । उनकी पत्नी इस व्यवहार को कुछ नहीं कहती । इन्हीं के जमात जो हैं, वे भी विदेशी प्रेमिकाओं से सम्बन्ध रखते हैं, इस बात का किसी पर कुछ असर नहीं होता । वे अमीर हैं । इनके पुत्रों को किसी को तमाचा मारकर या और कुछ करके ठीक करना पडता है । यानी भारत में रहकर सब पाश्चात्य के समान चल रहा है । इनको सामाजिक मर्यादा, संस्कृति कुछ नहीं हैं । उन को जैसा चाहिए, वैसा वर्तन कर रहे हैं ।

जैनेन्द्रकुमारजीने यहाँ साठोत्तरी उपन्यासों में आर्थिक समस्याएँ जो बताई हैं, वे आर्थिक अतिरेक के कारण जो दुष्परिणाम समाज पर होते हैं यही दिखाने का प्रयास किया हैं ।

आरंभिक उपन्यासों में आर्थिक अभाव का ही चित्रण है । स्वतंत्र्यता के पश्चात पैसों का केंद्रीकरण होने के कारण मनुष्य किसी भी गलत रास्तेपर जाकर गैर कृति कर सकता है । वह पशू के मुताबिक उसका सब व्यवहार चल रहा है, इसलिए जैनेन्द्रजीने आरंभिक उपन्यासों में जैसे "कल्याणी" में भारतीय तपोवन और "अनन्तर" में "शान्तिधाम" की जो सूचन के रूप में संकेत किया था, उस समय मनुष्य इतना गया बिता नहीं था। भारत स्वतंत्र्य होकर थोडे दिन हो गये थे । पैसे का अभाव ही था । लेकिन साठोत्तरी में आर्थिक अतिरेक के कारण मनुष्य की गन्दी हरकतें देखकर पहले जो"भारतीय तपोवन" और "शान्तिधाम" की कल्पनाएँ थीं, उसका विस्तार से विवेचन करने के लिए जैनेन्द्रजी ने "अनामस्वामी" लिखकर " आश्रम " की व्यवस्था की है ।

इस आश्रम में लोगों को शान्ति मिलें उनको सुख मिले । इन भौतिक साधनों से वह सुखी नहीं हो सकता, बल्कि बिगडता जा रहा हैं । इसलिए उसमें परिवर्तन होकर कुछ अच्छे विचार आकर दूसरों को दुःख पहुँचाना अन्याय, अत्याचार करने के सिवा उसके मन में दूसरों के प्रति सहानुभूतियाँ निर्माण हो जाय । इसलिए जैनेन्द्रकुमारजी ने साठोत्तरी उपन्यासों में " अनन्तर " में " शान्तिधाम ", अनामस्वामी में आश्रम, कलकत्ता दशार्क में स्वामी विद्यासागर का आश्रम, स्वामी भोदानन्द का आश्रम आदि बताने का प्रयास किया है । आरंभिक उपन्यासों में इसकी आवश्यकता नहीं थीं । इस प्रकार जैनेन्द्रकुमारजी के उपन्यासो में आर्थिक चिन्तन बहुत महत्वपूर्ण रहा है ।

[ड] राजनीतिक समस्या :-

जैनेन्द्रकुमारजी ने अपने उपन्यासों के लिए बड़े आधारफलक की आवश्यकता कभी अनुभव नहीं की । इसी से उनके उपन्यासों में समकालीन राजनीतिक परिस्थितियों के चित्रण का या तो पूर्णतः अभाव रहा है या अत्यन्त गौण रूप में ही प्रस्तुत हो चुका है । जैनेन्द्र के कथा साहित्यसे सामान्य निष्कर्ष प्राप्त होता है कि राजनीति में जैनेन्द्र की विशेष रुचि नहीं है । उस सम्बन्ध में उन्होंने विशेष चिन्तन नहीं किया है । किन्तु यथार्थतः यह नहीं है । आरंभिक उपन्यासों में निश्चय ही जैनेन्द्र राजनीति की उपेक्षा करते रहे हैं, क्यो कि आरंभिक उपन्यासों में भारत स्वतंत्रता के लिए आन्दोलन, असहकार, सत्याग्रह, सशस्त्र क्रान्ति दल आदि देश की परतंत्रता की श्रृंखला तोडने का बीडा उठानेवाले कुछ साहसी और आत्मबलिदान का आवाहन कर सकने वाले युवकों का एक दल विदेशी राज्य के प्रति हथियार उठाकर देश वासियों को जागृति प्रदान करना आदि विषयों को लेकर ही चित्रण रहा है । भारत स्वतंत्रता के लिए नवयुवकों को जागृत करना उनको चुनौती, प्रेरणा देना इतना ही आरंभिक उपन्यासों में उपन्यासकारों ने किया हैं, उस समय भारत स्वतंत्रता की आवश्यकता थी । मगर साठोत्तरी उपन्यासों में देश में कुछ और ही राजनीतिक समस्याएँ निर्माण हो गयी । इसी कारण उसपर फिर राजनीतिक चिन्तन रहा है ।

जैनेन्द्रकुमारजी के उपन्यासों की भी वही अवस्था दिखाई देती है । उनके आरंभिक उपन्यासों में यही दिखाई देता है । जैनेन्द्रकुमार के पहले उपन्यास " परख " में राजनीतिक परिस्थितियों अथवा तत्सम्बन्धी चिन्तन का पूर्ण अभाव है, किन्तु उपन्यास के अन्त में

केन्द्रित सम्पत्ति, केन्द्रित व्यवसाय तथा शारीरिक श्रम का मूल्य आदि पर टिप्पणी प्रस्तुत की गयी है । अर्थ सम्बन्धी इस चिन्तन को राजनीतिक चिन्तन की पीठिया माना जा सकता है । " सुनीता " में राजनीतिक परिस्थितियों के संकेत - अंग्रेजी सरकार के विरुध्द भारतीय जनता के असहयोग, सत्याग्रह तथा क्रान्ति में कूद पडनेवाले शहीदों के उल्लेख प्राप्त हैं । " सुनीता " में " हरिप्रसन्न " एक क्रान्तिकारी के रूपमें प्रस्तुत किया है । " सुनीता " को " हरिप्रसन्न " क्रान्तिकारी और सुखदा के"जितेन"मि.लाल," हरिश " में फर्क है । साथ हो साथ " विवर्त " का जितेन भी क्रान्तिकारी बना है, लेकिन वह प्रेम में असफलता मिलने के कारण क्रान्तिकारी बनकर पंजाब मेल गिराता है, उसे क्रान्तिकारी नहीं कहा जा सकता । इन प्रश्नों के माध्यम से व्यक्ति के जीवन में राष्ट्रीय कार्यों और घर-गृहस्थी के द्वन्द्व को ही उभारा गया है, कोई गंभीर राजनीतिक चिन्तन प्रस्तुत नहीं हुआ है ।

कल्याणी, सुखदा, तथा विवर्त, में जैनेन्द्र ने सशस्त्र क्रान्तिका प्रबल विरोध किया है । राजनीतिक क्षेत्र में गांधी के अहिंसा सिध्दान्त के समर्थक होने के कारण वे क्रान्तिकारी-वीरों को कभी समर्थन नहीं दे पायें । क्रान्तिकारी का संघर्ष प्राय: एक ऐसी शक्तिसंपन्न सत्ता के विरुध्द होता है, जिस के पास अपनी सुरक्षा तथा विपक्षी के दमन के लिए विशाल सशस्त्र सैन्य दल होता है । अत: क्रान्तिकारी अपने सीमित साधनों एवं शक्ति से छुप कर वार करता और सरकारी तंत्र के विध्वंस के लिए प्रयत्नशील रहता है ।

जैनेन्द्र ऐसे संघर्ष की अपेक्षा गांधीजी के " असहयोग " तथा " सत्याग्रह " का पक्ष लेते हैं । " कल्याणी " में क्रान्तिकारी पात्रों के विरुध्द जैनेन्द्रने अपने तर्क प्रस्तुत किये हैं, -

" कानून मेरा खुद का नहीं है । लेकिन तुम लोग सामने से बढ़कर उसका मुँह क्यों नहीं पकड़ लेते हो ? पीछे से वार करते हो, भला इससे क्या होगा ? तभी तो है, कि कानून की तरफ से वार आता है, तो तुम्हें पीठ दिखानी होती है । हम तो यही समझाते हैं, भाई, कि छाती-पर वार देना और वार लेना चाहिए । क्यों ? " १ " कल्याणी " में जिस तरह क्रान्तिकारी का निर्माण हुआ है, उसी प्रकार " सुखदा " में जैनेन्द्रजी ने क्रान्तिकारी दल और उसकी विचारधारा को स्थान दिया है । नायिका सुखदा स्वयं राष्ट्रीय क्रान्तिकारी दल के साथ कार्य करती है । गांधीजी के सक्रिय आन्दोलन तथा सुधारवादी नीति उसे व्यर्थ लगती हैं, इसी से वह दल में दल के नेता हरीश की अपेक्षा सशस्त्र विद्रोह करनेवाले " लाल " के चिन्तन से अधिक प्रभावित होती है । जैनेन्द्र ने मि. लाल की विचारधारा को पर्याप्त प्रमुखता से प्रस्तुत किया है, किन्तु यह स्पष्ट है, कि उसे विरोधी पक्ष के चिन्तन के रूप में ही रख सके हैं । मि. लाल को साध्य की सिध्दि के लिए अनैतिक विद्रोही घोषित किया जाता है । यानी हरीश गांधीवादी विचारधारा का है । मि. लाल का विचार कुछ और ही है ।

विवर्त का प्रस्तुत क्रान्तिकारी दल और नेता जितेन्द्र भी राजनीतिक अथवा आर्थिक व्यवस्था से विरोध अथवा असंतोष के कारण नहीं । अतः उसके माध्यम से "क्रान्ति " के सम्बन्ध में स्वस्थ गंभीर दर्शन की अपेक्षा नहीं की जा सकती । "जितेन" अहिंसा का अर्थ "चींटियों को बुरा खिलाने" तक ही समझता है, और उससे किसी परिवर्तन की आशा व्यर्थ समझता है । "२

---

१. " कल्याणी " जैनेन्द्रकुमार " पृ. ९२ ।
२. " विवर्त " " जैनेन्द्रकुमार " पृ. ८६ ।

वह धनी वर्ग का धन लूट कर गरीबों में वितरित करता है, किन्तु उसके इस कार्य के पीछे वर्ग - संघर्ष की कोई प्रेरणा अथवा चिन्तन नहीं है, मात्र स्वयं निर्धन और प्रेमिका के धनी होने के कारण उत्पन्न ग्रंथियां है ।

जैनेन्द्र ने अपने आरंभिक उपन्यासों में ऐसे क्रान्तिकारी लाये हैं, लेकिन ऐसी सीमित क्रान्ति और गलत रास्तेपर जानेवाले क्रान्तिकारी देशाके स्वातंत्र्य के लिए उपयोगी नहीं हैं, जैनेन्द्र गांधीवादी विचार के रहने कारण, उन्हें " असहकार, सत्याग्रह, ऐसे हथियार को उचित मानते हैं । इसी क्रान्ति के खिलाफ ही विचार व्यक्त करने के लिए उन्हें उपन्यासों में लाया गया है ।

आरंभिक उपन्यासों में निश्चय ही जैनेन्द्र राजनीति की उपेक्षा करते रहे हैं, किन्तु अपने आर्थिक और राजनीतिक विचारों का उन्होंने जयवर्धन में प्रमुख प्रतिपाद्य के रूप में प्रस्तुत कर क्षति-पूर्ति कर दी हैं ।

" जयवर्धन " जैनेन्द्र के उपन्यासों में विषय-वस्तु की दृष्टि से सर्वथा भिन्न और विशिष्ट रचना है । अपने राजनीतिक आदर्श को जैनेन्द्र ने " जयवर्धन " में उपन्यास का रूप देने का प्रयत्न किया है । इसमें जैनेन्द्र का प्रतिपाद्य इतना महत्वपूर्ण है कि शिल्प के धरातल पर वह रचना उपन्यास सिध्द हो पाएगी, इसमें संदेह नहीं हैं । जयवर्धन का नायक प्रतिक अथवा बिम्ब मात्र है, वास्तव होने के लिए नहीं हैं । जैनेन्द्रजी ने " जयवर्धन " में राजनीतिक विचार आदर्श के रूपमें रखे हैं, उसकी रचना स. १९५६ में हुई थी, उस समय दलों में एकमत नहीं था, और कुछ बाते थी, इसलिए जैनेन्द्रजी ने उच्च राजनीति पद

पर रहनेवाला नेता कैसा चाहिए ? राज्य कैसा चाहिए ? दल कैसे हो ? आदि सभी बाते आदर्श के रूपमें बताने का प्रयास किया है । जैनेन्द्रजीने नयी व्यवस्था शीर्षक कहानी में यह स्पष्ट किया है कि संपूर्ण विश्व को एक इकाई के रूपमें प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न व्यवस्था का नहीं चेतना का है । " जयवर्धन " में इस तथ्य का उल्लेख हुआ है - " राज्यों के प्रतिनिधि मिलकर बार-बार बैठे हैं, और अन्तर-राष्ट्रीय रूप में दुनिया को उन्हों ने बडी से बडी संख्या बन सकती है, पर अन्तरराष्ट्रीय अथवा मानवीय अन्त:करण उत्पन्न होने का काम उस तरह नहीं हो सकता है । एकता अत:करण में नहीं है, तो बाहर के जुडाव से कैसे आएगी ? राजनीति के क्षेत्र में संपूर्ण विश्व द्वारा इस दृष्टिकोण को अपनाने में जैनेन्द्र मानवीय समस्याओं का समाधान संभाव मानते है । विश्व-बन्धुत्व के आदर्श के समक्ष जैनेन्द्र संकुचित राष्ट्रीयता के आदर्श को अनुचित ठहराते हैं । सिध्दान्त: संपूर्ण भूमिको अखंड मानते हुए भी व्यवहार में राष्ट्रों और राज्यों की धारणा की आवश्यकता को सर्वथा नकारा नहीं जा सकता । संपूर्ण भूमि की एकता को सहने योग्य सामर्थ्य शायद मानव में नहीं है, इसीसे राष्ट्रों में विभाजन अनिवार्य बना हुआ है । जैनेन्द्र ने वर्तमान स्थिति को स्वीकार करते हुए भिन्न राष्ट्रों में प्रचलित शासन-तंत्रोपर विचार किया हैं । जैनेन्द्रजी ने साम्यवादी शासन पध्दति का विरोध किया है, क्यों कि अधिनायकतंत्र उन्हें मान्य नहीं हैं, जनतंत्र का वे स्वीकार करते हैं, इसलिए उन्होंने अपने ये विचार " जयवर्धन " में व्यक्त किये हैं ।

---

१. " जयवर्धन " जैनेन्द्रकुमार " पृ. ४२६ ।

जैनेन्द्रजी ने " जयवर्धन " में राज्य और राज्य के अधिपति से सम्बन्धित समस्त आदर्श गांधीजी के राजनीतिक आदर्श " रामराज्य " को ओर बढ़ने के अनिवार्य कदम है । जैनेन्द्र के विचार हैं, कि " हर जगह दखल देने जा पहुँचने के लोभ में राज्य को कभी न पड़ना चाहिए । राज्य की जिम्मेदारी उससे पहले लगभग नहीं है, जब तक ज्ञान और माल पर स्पष्ट संकट न हो जाये । राज्य के लिए तब भी कुछ है, तो समाज की ओर से, यानी समाज में सीधे यह कुशलता और क्षमता आनी चाहिए कि असामाजिक और हिंसक तत्व पहले तो उपजे नहीं, और हो भी तो सक्रीय और उग्र न हो सकें । राज्य की पुलिस के भरोसे ही यदि नागरिक जब - सुरक्षा अनुभव करेगा तो वह स्थिति हमें बर्बर दशा तक ले जाएगी । " १

जैनेन्द्रजी ने " जयवर्धन " में " रामराज्य " कल्पना यानी सिर्फ राज्य के अन्दर लोग अपनी सुरक्षा पुलिस पर ही निर्भर रख दे तो उसकी सफलता प्राप्त नहीं होगी । तो ऐसे सवाल ही खड़े नहीं होने चाहिए, इसके साथ ही साथ जैनेन्द्रजी ने " लिजा " द्वारा राज्य-कारोबार किस तरह चलाना चाहिए ? दलों में धर्म को लेकर एकता किस तरह चाहिए आदि लिजा के द्वारा बनाये गये विचार महत्वपूर्ण हैं ।

उनके अनुसार राज्य सिध्दान्त से अधिक व्यवस्था की वस्तु है, यदि दो भिन्न धर्म के व्यक्ति एक मंत्रिमंडल में हो सकते हैं, तो भिन्न मत के व्यक्ति भी हो सकते हैं । मिली-जुली सरकार के पक्ष में जयवर्धन का विचार है कि इससे सब दल एक निर्णय पर आ जाएंगे, दलीय शासन समाप्त होगा । शक्तियाँ परस्पर काट-बांट में नष्ट न होंगी, अपितु परस्पर एक-दूसरे को पूर्णता देंगी ।

१, १" जयवर्धन " जैनेन्द्रकुमार पृ. १६३, २०५ ।

जैनेन्द्र का विचार है, " राज्य अब सब [दलों] का होना चाहिए, जो विरोध में रहे हैं, उनका वहाँ प्रमुख हाथ होना चाहिए । कारण विरोध में रहने से समग्र राजनीति के सम्बन्ध में उनमें जागरूकता रही है । शासनस्था दल शासन का भोग पाकर कुछ - स्खालित और शिथिल हुआ हो, तो यह असंभाव नहीं हैं । इसलिए पदारूढ दल चाहें वह बहुमत रखाता हो, नये मंत्रिमंडल में प्रमुख नहीं बनना चाहिए..."१ इसका विरोधी चिन्तन जैनेन्द्रजी ने " जयवर्धन " में स्वामी चिदानन्द के द्वारा प्रस्तुत किया है । उनका विचार है, कि " समाज के निर्माण में राज्य का योग अनिवार्य है, और वह निर्माण नीति की अनेकता से नहीं, एक नीति की संयुक्तता से ही हो सकता है । " २ सर्व दलीय संस्कार का यह आदर्श राजनीति के इतिहास में अपूर्व हो सकता है । राष्ट्र के निर्माण में विरोधी दल के विचारों और शक्तियों का भी सहयोग लिया जा सके, यह सरकार के लिए अत्यन्त आदर्श स्थिति हो सकती है, किन्तु विरोधी दल को सरकार का अंग बना लेने पर विरोधी दल का अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा । जनतंत्र में विरोधी दल शासक दल को मर्यादा में रखाने तथा उन्हें जनमत के अनुरूप आचरण करने के लिए बाध्य करता है, यही उसकी उपयोगिता है ।

जैनेन्द्रकुमार के आरंभिक उपन्यासों में स्वातंत्र्यपूर्व उपन्यासों में " सुनीता ", " सुखादा ", "विवर्त " आदि में राजनीतिक समस्याएँ बिलकुल अंशिक रूप में बताने का प्रयास किया हैं, उस में प्रस्तुत

---

१. " जयवर्धन जैनेन्द्रकुमार - पृ. ४०७ ।

२. " जयवर्धन" जैनेन्द्रकुमार - पृ. ४०१ ।

क्रान्तिकारी जो क्रान्ति करना चाहते हैं, लेकिन जैनेन्द्र गांधीवादी होने के कारण उनके विचार इस क्रान्ति के खिलाफ हैं । इतना ही चित्रण आरंभिक उपन्यासों में [स्वातंत्र्यपूर्व] रहा है, मगर स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास " जयवर्धन " में नेता, विरोधी दल, राज्यव्यवस्था, जनतंत्र, जनता की सुरक्षा, धर्म और राजनीति आदि विषयों पर महत्वपूर्ण विचार बताने के कारण उनका " जयवर्धन " आदर्श के रूप में रहा है । उनके पूरे उपन्यास कृति में " जयवर्धन " यह एक ही उपन्यास राजनीतिक दृष्टि से उच्च स्थान रखता है ।

जैनेन्द्र कुमारजी के स्वातन्त्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में राजनीतिक समस्याएँ प्रस्तुत की है । उसी प्रकार जैनेन्द्रकुमार के साठोत्तरी उपन्यास है, मुक्तिबोध, अनन्तर, अनामस्वामी, दशार्क ये चारों भी उपन्यासों में राजनीतिक चित्रण रहने से राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रहे हैं । "मुक्तिबोध" में नायक सहाय महत्वपूर्ण राजनीतिक व्यक्ति है । वह मंत्रि-पद के दायित्वों और अधिकारों से मुक्त होकर गाँव में रहकर कृषि द्वारा जीवन-यापन का सुख प्राप्त करना चाहते हैं, लेकिन सब स्वार्थी लोग परिवार के और बाहर के इस निर्णय को विरोध करते हैं, उच्च मंत्रिपद पर रहनेवाले सहाय अगर त्यागपत्र देंगे तो उनका निजी स्वार्थ साध्य नहीं होगा । यानी जैनेन्द्रजी ने " जयवर्धन " में आदर्श कुछ बातें बतायी है । उसी के अनुसार सहाय गांधीवादी होने के कारण मंत्रीपद का त्यागपत्र देना चाहते हैं ।

जनतंत्र जनता की शक्ति का तंत्र कहलाता है, किन्तु वर्तमान भ्रष्ट रूपमें जनता की असहायता को देखते हुए वह एक तमाशा मात्र

बनकर रह गया है । और "मुक्तिबोध" में जैनेन्द्र इस स्थितिका ही चित्राण करते हैं, वे कहते है, " अरे भाई पार्लियामेन्ट से क्या होता, बस दो चार बरस उछल-कूद करने का मौका मिल जाता है । बाहर के लोग देखते रहते हैं, कि, हमारा आदमी क्या कर रहा है । इस तरह नकेल तो बाहर हम लोगों के साथ ही रहती है । नहीं, तो जनतंत्र के माने कुछ नहीं रह जाते हैं । ताकत सरकार के हाथों में हो और बाहर सब कोई असहाय्य हो जाए, तो वह जनतंत्र कहाँ रह जाता है, कोरा तमाशा बन जाता है ।" १ यानी "मुक्तिबोध" में जैनेन्द्र ने जो सदस्य या प्रतिनिधि के रूपमें संसद में जाते हैं, वे जनता के प्रश्नों पर सोचते नहीं, उनका जो वेतन है, उसका बोझा प्रजा पर ही है, लेकिन प्रजा के हित के बारे में कुछनहीं होता, दो चार बरस सिर्फ खुद कमाने के लिए ही जाते हैं । यह सब तमाशा है । ऐसा ही जैनेन्द्रजी का कहना है । यह सब चित्र देखकर ही मि. सहाय इस पद का त्यागपत्रा देकर गाँव में जाकर खेती करने के विचार पर आ गये हैं, यह गांधीवादी विचारधारा का हो समर्थन है ।

"अनन्तर" में भी कुछ ऐसा ही चित्राण रहा है, जिस प्रकार "मुक्तिबोध" का मि. सहाय दुविधा अवस्था में रहता है, राजनीतिक, पारिवारिक कारणों से । उसी प्रकार अनन्तर के प्रसाद की भी स्थिति है, पुत्र और बहू को मधुपर्व भेजकर वापस आते वक्त उस के मन पर असर हुआ है, अपने व्यतीत जीवन से वह नाराज है और उसे माऊँट आबू पर प्रसाद को अपरा लेकर जाती है । जहाँ किराये के मकान में इन्हीं गन्दी जगह रहने वाले प्रसाद अपने पुत्रा और पुत्रावधू को चार हजार रुपये देकर मधुपर्व मनाने कश्मीर भेजता है, उनका विचार है, " स्वयं का घर बाँधना चैतन्य को बाँध डालता है ।" २ ये सब विचार भ्रामक हैं ।

---

१. "मुक्तिबोध " जैनेन्द्रकुमार पृ. २४, ।
२. "अनन्तर" जैनेन्द्रकुमार पृ. ७९ ।

यानी चार हजार मधुपर्व के लिए देना, किराये के मकान में रहना यह ऐसा क्यों होता है, यह सोचने का प्रयास किया, तो इस कारण वर्तमान युग अति भौतिकवाद तथा राजनीति से त्रस्त है । इसलिए ऐसा होता है । पाश्चात्य अन्धानुकरण करना जैसे "अपरा" विदेश से लौट कर आयी है, तलाक जीतकर भारत में । पाश्चात्य संस्कृति में नैतिकता नहीं है । और लोग उसका अनुकरण बहुत शौक से करते हैं । अपरा विदेश से अनुभूति लेकर आयी है, वह कहती है, " आदमी-आदमी के बीच जितनी शंका पैदा कर दी है, उसे नैतिकता कहते हैं, अपने को गिनती में न । " 1 अपरा जीवन की यथार्थ स्थिति के प्रति ईमानदार रहना चाहती है, अत: अनैतिकता के विषय में उसके विचार अधिक सुलझे हुए हैं । ये सब भौतिकवाद के परिणाम होते हैं, इसलिए "अनन्तर" में वन्या" ऐसी ही विश्व-क्रान्ति की आवश्यकता पर बल देती है, जिससे एक नया मानव और नयी मानव चेतना उत्पन्न करनी होगी । उसका नारा " जय-जगत" होगा । वन्या समाज-सेविका के "शान्तिधाम" खोलने की योजना में सक्रिय है । कल्याणी में भारतीय तपोभूमि "अनन्तर" में "शान्तिधाम" इन्हीं की आवश्यकता सिर्फ इसलिए जैनेन्द्रजी ने बताई है, कि आज का मानव सही रास्तेपर आ जाय, यह सब गांधीवादी विचारधारा के प्रतिक है ।

जैनेन्द्रजी ने "अनन्तर" में वर्तमान राजनीतिक परिस्थितियों में जनता की सेवा के नाम पर आये स्वार्थी नेताओं की वृत्ति पर व्यंगात्मक स्वर में अपने विचार बताने वक्त लिखाते हैं, " नेता जनता के साथ है, पर

1. "अनन्तर" जैनेन्द्रकुमार - पृ. ८१ ।

इस ध्यान के साथ कि उससे अधिक वह अपना हो । उसका तादात्म्य जनता के पार किसी तरह तत्व के साथ होना आवश्यक है । जनता के साथ हो तो यह नहीं कि नेता वहाँ खोया हो .... । " १

यानी आज की राजनीतिक परिस्थिति व नेता लोग, उनका खुद का स्वार्थ, जनता के प्रति अहित की भावना आदि सभी बातों को बताने का प्रयास जैनेन्द्रजी ने अपने साठोत्तरी उपन्यासों, "मुक्तिबोध" और "अनन्तर" में किया है । साथ ही साथ उन्हीं के "अनामस्वामी" और "दशार्क" ये दोनों ही उपन्यास बहुत महत्वपूर्ण रहे हैं । इस में चित्रित प्रसंग और परिस्थिति दिखाने का प्रयास किया गया है । कुछ अलग उद्देश ही जैनेन्द्रजी का उसके माध्यम से सिध्द होता है । " अनामस्वामी " में त्यागपत्र का प्रमोद अपने बाल-जीवन का सहपाठी प्रबोध जो अनामस्वामी है, उनके पास आता है, यह प्रमोद सर. पी. दयाल है, जिन्होंने उनकी बुआ "त्यागपत्र" की मृणाल का व्यतीत जीवन का बेहाल की स्मृति से जज पद का त्याग पत्र दिया था । अब वे इस आश्रम में यानी अनामस्वामी के पास अपनी विधवा पुत्री की पुत्री [नातिन] उदिता को लेकर आये हैं । वह विदेश में जाकर फँस गयी है । . . एम. ए. करते वक्त पैसो के अभाव के कारण दो दो प्रेमियों के साथ प्रेम करके गर्भवती बन गयी है ।

इस उदिता आर्थिक समस्या राजनीति से जुडी है । माँ विधवा है, उससे पैसे तो मिल नहीं सकते । विदेश में पैसों की जरुरत है । इसलिए वह अपने "तन" से ही पैसा प्राप्त करना चाहती है, वह प्रेम नहीं पैसे के लिए प्यार करके उसका यह हाल होता है । उसे सर पी. दयाल लेके आश्रम आते हैं । यह क्यों हुआ, यह विषय महत्वपूर्ण है ।

साथ ही साथ "अनामस्वामी" में शंकर उपाध्याय जो विवाह में असफलता के कारण प्रेयसी, प्रेयसी के प्रति, अपनी पत्नी इन्हीं को परेशान करता है । इन दो औरतों को हत्या करता है । प्रेयसी का पति कुमार को षडयन्त्र के फलस्वरूप लम्बी बीमारी से पीडित करता है । खुद भी आत्महत्या करने का प्रयास करता है । यह सब आज प्रेमकुंठित होकर शंकर उपाध्याय कर रहा है । आज आधुनिक युग में विज्ञान के अविष्कार कें कारण मानव सब कुछ भूल गया है । उसने नैतिकता, उसके आचार, विचार बदल गये हैं । साथ ही साथ दूसरों के साथ नफरत से देखा रहा है । इसलिए उसके विचार में परिवर्तन आने की अत्यन्त आवश्यकता है । और यह परिवर्तन आंतरिक होनेके लिए उसे आध्यात्मिक मार्ग पर लाना जरुरी समझकर जैनेन्द्रजी ने "अनामस्वामी" में आश्रम की स्थापना की है ।

आरंभिक उपन्यासों में जैनेन्द्रजी ने "कल्याणी" और "अनन्तर" में यह बात अंशिक रूप में बताई थी, लेकिन अब वह वितृत रूपमें बताने का प्रयोग अनामस्वामी में किया है । क्यों, कि उस जमाने को इसकी आवश्यकता नहीं थी । सब भारतीय अपने संस्कृति, सामाजिक मर्यादा के अनुसार बर्ताव करता था, लेकिन इस विज्ञान युग में पैसों का केन्द्रीकरण और पाश्चात्योंका अनुकरण इसी कारण मनुष्य पशु की तरह सब कुछ कृत्य कर रहा है । देश के अहित के बारे में बुरे कृत्य करता है । "शंकर"जैसा खुद का परिवार तोडता है, साथ ही साथ दूसरों का भी परिवार उस परिवार के लोगों को मारकर ही तोडता है । यह स्थिति आज निर्माण हो गयी, इसलिए आध्यात्मिकता गांधीविचार की आज आवश्यकता है । इसलिए जैनेन्द्रजी ने "अनामस्वामी" में मौलिक विचार व्यक्त किए हैं ।

जैनेन्द्रजी का अन्तिम उपन्यास "दशार्क" कथा, शिल्प, भाषा, शैली, विषय सब से अलग है । इसके पहले जैनेन्द्रजीने अंशिक रूपमें "दशार्क" में जो समस्या बताई है, वह बताने का प्रयास किया है । यानी आरंभिक उपन्यासों में अंशिक रूपमें और साठोत्तरी में विस्तृत रूप में बताया है । आरंभिक उपन्यास में सुखदा, [कोयलेवाले साथ] विवर्त की "तिन्नी" व्यतीत की "बुधिया" ये जो आर्थिक अभाव के कारण जिस रास्तेपर चले जाते हैं, उन्हींको लाने के लिए समाज जिम्मेदार रहा है । उसी प्रकार "दशार्क" में आर्थिक अभाव के कारण दशार्क की नायिका रंजना और महेंदीबाई, सकिना, मालती इसी व्यवसाय में यानी तन के व्यापार का व्यवसाय वेश्या व्यवसाय में आ गयी है, परिवार में आर्थिक अभाव के कारण रंजना के बारे में उसका पति शेखर ससुर जैसा अमीर बनने केअभिलाषा में जुआरी बनता है, उसमें हार हो जाने से शराबी, फिर परिवार टूटना, परिवार टूटने से उसकी पत्नी रंजना वेश्या बाजार में ।

रंजना को हमेशा के लिए प्राप्त करने के लिए मिल मालिक सेठ मानेकलाल, पाँच लाख को खरीदना चाहता है, यानी रंजना को हमेशा कें लिए चाहने के इरादे को रंजना का इन्कार और फिर अखबार में उसके खिलाफ आवाज उठायी जाति है । इसका परिणाम चारों ओर दंगे, आन्दोलन, घेराव, बन्द, आदि सवाल खडे हो जाते हैं । यानी ये सब राजनीतिक बाते हैं । देश के स्वातंत्रता के लिए यह सब का प्रयोग किया जाता था लेकिन उच्चवर्ग का आदमी निम्नवर्ग पर किस तरह अन्याय कर रहा है और एक दूसरों के खिलाफ दोनों तरफ से स संघर्ष चल रहा है । वेश्याओं का आन्दोलन और समाज के अमीर लोगोंका इन्हीं के खिलाफ आन्दोलन इन्हीं के बीच पत्रकार, अखबार वाले सब लाभ उठा रहें हैं ।

सरकार कुछ नहीं कर रही है । देश के गृहमन्त्री रंजना के पास आकर रंजना को शहर छोडकर जाने को कह रहे हैं । यानी झगडा क्यों खडा हुआ ? किसने खडा किया ? परिणाम क्या होगा ? सही किसका है ? गलत किसका है ? आदि सवालों के जवाब ढूँढना यह एक विचारणीय विषय हो सकता है । यहाँ जो गृहमन्त्री महोदय आ गये हैं उनका भी परिवार टूट गया है, यानी उनकी पत्नी बहुत दिनों से उनके पास नहीं हैं, यह आर्थिक अतिरेक का परिणाम है । रंजना को पाँच लाख रुपये में खरीदनेवाले मानेक सेठ अमीर हैं, उनकी चार मिलें हैं । वे इस रास्तेपर क्यों आ गये हैं ? उनकी पत्नी मधुरिमा और उसका सम्बन्ध ठीक नहीं है, इसलिए सेठ वेश्या व्यवसाय करनेवाले रंजना को प्राप्त करना चाहते हैं । जैनेन्द्रजी ने सेठ और गृहमन्त्री इन्हीं के परिवार टूटने के कारण पैसे का केन्द्रीकरण होना यही बताया है । जैसे कि, पैसे से आदमी [illegible] सुख खरीद नहीं सकता । यहाँ जैनेन्द्रजी ने और कुछ पात्र बताये हैं, माधव, कालीचरण, पारमिता, ये जो बन गये हैं, उसका कारण राजनीतिक ही बन सकता है, उसको शासन या सरकार जिम्मेदार है, माधव स्मगलर, बन गया है, पारमिता क्रान्तिकारी और कालीचरण कुछ और ही । इसका जिम्मेदार सरकार और समाज ही है ।

जैनेन्द्रकुमारजी ने "जयवर्धन " में राज्य कैसा हो, जनतन्त्र कैसा चाहिए, यह बताया है, लेकिन दशार्क में रंजना जो व्यवसाय करती है, वहाँ मंत्री के सचिव का सहायक आकर मुफ्त में लाभ उठाना चाहता है, और इन्कार करने से बूट से मारकर पँसली में रंजना को चोट पहूँचाता है । पुलिस [illegible] अफसर आकर चोर को पकडने के लिए वेश्या की सहायता माँगते हैं, साथ ही साथ जो पैसे [illegible] तीन हजार माधवराव चोर ने दिये थे वे पैसे भी जोर देकर माँग रहे हैं । यानी तमाम सवालों के बारेमें कौन सोचनेवाला है ? यह ऐसा क्यों होता है ? कौन करता है ? यह ऐसा ही रहना चाहिए क्या ? या उसमें सुधार की आवश्यकता है ? अगर सुधार करना है तो किस तरह करना चाहिए ? सरकार, समाज, इस को मान्यता देगी या नहीं ?

इसमें किसका लाभ है ? इसके असर किस प्रकार होते हैं ? भारतीय संस्कृति या सामाजिक मर्यादा के अनुसार यह वर्तन है या नहीं ? आदि हजारों सवालों का निर्माण हो सकता है । देशमें या समाज में वेश्या चोर, क्रान्तिकारी बनने की क्या आवश्यकता है ? समाज में वर्गभेद क्यों तैयार होते हैं ? पैसे की विकेंद्रीकरण की आवश्यकता है, या नहीं ? यह सब जादा पैसा आने के कारण या जादा पैसे आने के लिए ही किया जा रहा है । नैतिकता के लिए ज्यादा पैसे की आवश्यकता नहीं है । थोडे पैसे में भी आदमी सुख से जिंदगी बिता सकता है ।

जैनेन्द्रजी का आध्यात्मिक मार्ग और गांधीवादी विचारधारा ही महत्वपूर्ण है । जादह पैसे से आदमी सुखी नहीं रहता, साथ ही साथ नैतिकता भी खत्म होती है । शराबपान जैसी समस्याएँ खडी होती है । यह समाज के लिए अहितकारी बात है । जैनेन्द्रजी ने "दशार्क" में ज्वलन्त समस्या खडी की है ।

जैनेन्द्रकुमारजी ने अपने आरंभिक उपन्यासों में राजनीतिक समस्याएँ और साठोत्तरी उपन्यासों में चित्रित राजनीतिक समस्याओं का तौलनिक अध्ययन करनेका प्रयास किया, तो स्वातंत्र्यपूर्व के नेता, समय, उस समय लोगों की समस्या इनो को विचार में लाने का प्रयास किया, तो वह सब अलग था । उसी के अनुसार जैनेन्द्रजीने सिर्फ क्रान्तिकारी लोग कल्याणी, सुखदा, विवर्त, में लाने का प्रयास किया है, और यह क्रान्ति, सही नहीं है । यह बताने का प्रयास भी किया है । फिर स्वातंत्र्योत्तर में " जयवर्धन " उपन्यास में यहाँ की राजकिय परिस्थिति राजकिय नेता, विरोधी दल, जनता की सुरक्षा, आदि समस्याएँ लाकर उन्हीं को आदर्श के रूप में बताने के लिए राजनेता अपने उपन्यास में लाकर

मौलिक विचार बताने का प्रयास किया है ।

जैनेन्द्र के साठोत्तरी उपन्यासों में आज के आधुनिक युग और इस युग के सभी समस्याएँ राजनीतिक ही है । धर्म, जाँति-पाँति को लेकर राजकीय दल कैसे लाभ उठाते हैं, यहाँ सब शुरु होता है । जिस अच्छे रास्तेपर शुरूवात है, तो आगे सही जगह पर ही पहुँच सकते है ?

आगे सब सवाल ही सवाल खडे हो जाते हैं । नारी स्वातंत्र्य, पूंजिपति और मजदूरों, बेकारी, खाद-पानी कृषक ये सभी समस्याएँ वर्तमान युगमें कूछ दूसरे ही रंग में रंगी हुई हैं । वर्तमान युग समस्याओं का युग है । इन समस्याओं के साथ सामना तो करना चाहिए । इसलिए जैनेन्द्रजीने साठोत्तरी उपन्यासों में ये समस्याएँ बताकर समाज में सुधार लाने का प्रयास कर रहे हैं । आरंभिक उपन्यासों में और साठोत्तरी उपन्यासोंमें ... सभी समस्याओं के कारण और उसके परिणाम अलग अलग हैं । " सुखादा " "त्यागपत्र " "कल्याणी" में परिवार टूटा है, कारण अलग अलग है, लेकिन वे समाज के खिलाफ उस समय विद्रोह नहीं कर रहे थी । आज परिवार टूटने से रंजना चुपचाप न बैठकर वह नारी स्वातंत्र्य के कारण समाज के खिलाफ विद्रोह कर रही है । इसलिए आरंभिक सभी समस्याएँ और साठोत्तरी समस्याओं में जरुर अन्तर दिखायी देता है, और यह समय के अनुसार बताना जरुर था इसीलिए जैनेन्द्रजी ने वह बताने का प्रयास बहुत उचित ढंग से किया है ।

इ] समकालीन समस्या :-

साहित्य में गद्य का सूत्रपात गहन चिन्तण और मनन का प्रतीक है। इस गद्य का उत्कृष्टतम रूप उपन्यास है, और हिन्दी उपन्यासों का वास्तविक जन्म इसी गद्य के साथ हुआ है। बल्कि यह समझना चाहिए कि उपन्यासें ही वास्तविक गद्य की उत्पत्ति हुई।"१ गद्य साहित्य आज इतना लोकप्रिय क्यों है इसके पीछे एक तर्क है, और वह इसका अपना सामर्थ्य जो कि इसे निरन्तर आगे बढ़ता चला जा रहा है। हिन्दी में काव्य की विधा यद्यपि सबसे प्राचीन और लोकप्रिय है, तथापि आज मानव उपन्यास, कहानी की ओर अधिक अग्रसर हो रहा है क्यों कि काव्य में अनेक प्रकार के शास्त्रीय बन्धन होते है जिसमें किसी जागरूक, परिवर्तित शील एवं स्वच्छन्द समाज की विविधता का समावेश नहीं हो सकता। यानी गद्य का एकछत्र साम्राज्य ही हमारे साहित्यिक समाज पर छाया गया है। समकालीन साहित्य की विधाओंमें उपन्यास सबसे अधिक विशिष्ट और महत्वपूर्ण है।

आज उपन्यास जीवन के अधिक निकट है शायद इसीलिए प्रेमचन्द ने उसे जीवन का चित्रमात्र समझा हैं। उसमें समाज की प्रगति का हर पहलू प्रतिबिंबित होता है। अभिजात या सामाजिक समाज का विघटन और आधुनिक युग का आरम्भ आधुनिक युग के आन्तरिक संघर्ष की बढ़ती हुई तीव्रता और पूँजीवाद के विकास से संयुक्त प्रथा का -हास इत्यादी सभी का प्रतिनिधीत्व उपन्यास में मिलेगा।

यही नहीं अब मनोरंजन को छोड वे वास्तविक जगतमें आ गये हैं। यहाँ मानव के रूदनया क्रंदन से वे बचकर नहीं निकल सकते। समाज के भीतर वर्ग और वर्ग का संघर्ष, फिर वर्ग के भीतर कुल और कुल का, कुलमें परिवार और परिवार का,

---

१. शिव नारायण श्रीवास्तव - हिन्दी उपन्यास पृ. ७९

अन्ततोगत्वा परिवार के भीतर व्यक्ति और व्यक्ति का संघर्ष इन सबपर टिककर उपन्यासकारकी दृष्टि विकसित होती रही, जिससे उपन्यास में सामाजिक वस्तुओंका अनुपात बढता गया।

साहित्य में गद्य को महत्वपूर्ण स्थान और गद्यमें उपन्यास विधा को स्थान है, क्यों कि आजके आधुनिक युवा में मानव के सामाजिक समस्याओंका चित्रण और वही उसकी भाषामें बताने का प्रयास उपन्यासमें किया जाता है। साथ ही साथ आज उपन्यासके प्रकार भी बहुत बन गये हैं उनमें मनो विश्लेषण — वादीउपन्यासोंका स्थान अनन्यसाधारण है। स्वतंत्रता के पश्चात व्यक्तिवादी उपन्यासोंके सृजन में महत्वपूर्ण प्रगति हुई। इस महत्वपूर्ण प्रगति का एक कारण यह है कि पश्चिमी विचार धारा के अस्तित्व-वाद ने व्यक्ति के अस्तित्व पर संकट दर्शाकर व्यक्ति को अस्तित्व के प्रति सचेत किया। स्वतंत्रता के बाद व्यक्ति शिक्षा के प्रसार के कारण बौध्दिक अधिकारों के प्रति सचेत एवं स्वाभिमानी होनेसे अपने आपकी समाज की विशिष्ट इकाई के रूप में देखता है इसी कारण "मानव जीवन की वैयक्तिक मनोवृत्ति का जो स्वतंत्रता के उपरान्त लिखे गए उपन्यासोंमें मुखारित हुआ है वह समाज की इकाई व्यक्ति के जीवन की गतिविधियों, मानसिक संघर्ष, बौध्दिक ऊहापोहों एवं विचारों से ओतप्रोत है।" १

डा. पुरुषोत्तम दुबे व्यक्ति चेतना का अर्थ इनशब्दोंमें स्पष्ट करते हैं "व्यक्ति चेतना का अर्थ हुआ इकाई के रूपमें अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखनेवाले मूर्त एवं सजीव प्राणी की वह अन्त: प्रेरित मानसिक सचेत व शक्ति, स्थिति , दशा,

---

१. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास साहित्यमें जीवन दर्शन - "डा. सुमित्रा त्यागी"

क्षमता, जिसका सम्बन्ध के अपने विचारों, प्रभावों, संकल्पों, संवेदनाओंमें होता है।" १

हिन्दी साहित्य में गद्य को महत्वपूर्ण स्थान और गद्य में उपन्यास विधा और उपन्यास विधा में मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों का स्थान क्यों कि इसमें समकालीनता , सामाजिकता और समसामायिकता का चित्रण रहता है। और मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारोंमें जैनेन्द्र का स्थान महत्वपूर्ण रहा है, क्यों कि मनोवैज्ञानिक उपन्यासोंकी कथावस्तु सामाजिक उपन्यासों के विपरीत रहती है और कथावस्तू स्थूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर होती है, क्यों कि आज उसका लक्ष्य कथावस्तु, घटना चक्र अथवा आसपास का परिवेश नहीं है, उसका लक्ष्य है व्यक्ति और उसकी विशिष्ट चेतना। और आधुनिक युग में ऐसे चित्रण की अनिवार्यता है और इसमें जैनेन्द्र कुमार सफल रहे हैं, इसीलिए उनका स्थान मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में बढकर रहा है।

स्वातंत्र्य के बाद देश में विविध समस्याएँ दिखायी देने लगी जैसे - भ्रष्टाचार, आशा-निराशा, जीवन वैषम्य, जमींदारी उन्मूलन एवं राज्योंका विलीनीकरण दहेज, तलाक, अछूत आदि। और जैनेन्द्र कुमारजीने अपने आरंभिक उपन्यासों में तथा साठोत्तरी उपन्यासों में ये समस्याएँ चित्रित की है। यह कठिन काम रहता है क्यों, कि मनोवैज्ञानिक उपन्यास में व्यक्ति को केन्द्र मानकर उसके जीवन की व्यक्तिगत समस्याओंका व्यक्तिवादी दृष्टिकोणसे सामाजिक समस्या का चित्रण करना पडता है, और इसी कलाके लिए जैनेन्द्र बहुत सफल रहे हैं। उनके उपन्यासोंमें आज के आम आदमी की व्यक्तिगत समस्या, सामाजिक समस्या, आर्थिक समस्या, राजनैतिक समस्या सभी का चित्रण बहुत बहुत उचित ढंग से चित्रित है।

---

१. व्यक्तिचेतना और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास - डा. पुरुषोत्तम दुबे.पृ.४

जैनेन्द्रजीके उपन्यासोंमें पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक सभी प्रकार के विषय लेकर समस्याएँ बताने का प्रयास किया है। आधुनिक युग अतिभौतिकवाद और राजनीति से भरा है। उस आदमी में परिवर्तन करना महत्वपूर्ण काम है इसलिए जैनेन्द्र के आरंभिक और साठोत्तरी उपन्यास इसके लिए बहुत उपयोगी हैं। आरंभिक उपन्यास और साठोत्तरी उपन्यासों में समय और सामाजिक, राजनीतिक प्रवृत्तियों में बदल रहा है इसलिए समस्याओंके कारण भी बदल गये हैं। स्वातंत्र्यपूर्व उपन्यास और स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास साथ ही साठोत्तरी उपन्यासोंमें कुछ समस्याएँ जैसे की वैसी ही चित्रित है सिर्फ कारण बदल गये हैं। वे कालमान के कारण नये रूपमें आने के कारण अलग उपाय बताने का प्रयास रहा है।

आरंभिक स्वातंत्र्यपूर्व उपन्यासोंमें "परख", सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी ये उपन्यास हैं। इनमें अलग अलग समस्याएँ हैं। इसमें जो समस्याएँ हैं, वे आज भी जैसे की वैसी ही हैं। "परख" में "बाल विधवा विवाह" की समस्या है, कट्टोके साथ सत्यधन, माँ और समाजके नियम के कारण विवाह न करके पैसे जादा देनेवाले वकील की लडकी "गरिमा" से विवाहित होता है। आज समाज में बहुत परिवर्तन हुआ है ऐसे बात नहीं। आज भी विधवोंके साथ विवाह करने के लिए कितने लोग आगे आयेंगे बताना कठिन काम है, वे समाज के नियम को छोडना नहीं चाहतें। "सुनीता" में परिवारिक और राजनीतिक, आर्थिक समस्याएँ है। सुनीता अपने पति के मित्र हरिप्रसन्न के सामने विवस्त्र हो जाती है, इसका कारण क्या होगा.? यह महत्वपूर्ण सवाल है। उसके पति उसे सन्तुष्ट करने में असमर्थ रहने के कारण ही सुनीता हरिप्रसन्न के प्रति आकर्षित हो जाती है। जैनेन्द्रजीने यहाँ घर और बाहर का चित्रण किया है। "त्यागपत्र" में मृणाल की परिवार क्यों टुटा है ? परिवार टूटने से वह कहाँ कहाँ और कैसे फँसती है ?

और क्यों ? इन सभी सवालों पर विचार करनेके बाद आजकी नारी के जीवन में ऐसे बहुत प्रसंग आते हैं। आज आधुनिक युग और पाश्चात्य के प्रभाव के कारण मृणाल जैसे बहुत परिवार टूट कर आज वे भटक रहे हैं, बुरी आपत्तिमें फंस गये हैं इस में शक नहीं। "कल्याणी" में डा. असरानी अपनी पत्नी कल्याणी को पैसे के लिए अपनी प्रतिष्ठा के लिए कितना परेशान करते हैं, वे जाली उपाधि के डाक्टर हैं, पत्नी को सिर्फ अर्थ का साधन माना है, वे घर का काम और पैसे के लिए नौकरी करना चाहते हैं, और नौकरी करते वक्त बाहर कल्याणी जाने के कारण वे उसे संदेहसे देखते हैं, ऐसे डा. असरानी आज भी समाज में बहुत देखने को मिलेंगे।

यानी परख, कल्याणी, त्यागपत्र, सुनीता में चित्रित समस्याएँ आज हमें जैसे के वैसे ही दिखाई देती हैं। सिर्फ फर्क इतना रहेगा, कि इन उपन्यासों में चित्रित समस्याएँ स्वातंत्र्यपूर्व हैं। उसमें राजनीतिक समस्या में पात्र क्रान्तिकारी वगैरा भारत स्वातंत्र्य के लिए बन गये हैं। उस जमाने में आर्थिक समस्या का कारण अलग था आज औद्योगिकरण से जैसे पुँजीवादी बन गये हैं, वैसे उस समय नहीं थे।

स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में "सुखदा", विवर्त, व्यतीत, जयवर्धन ये चार उपन्यास आते हैं। "सुखदा" में आर्थिक अभाव के कारण परिवार टूटता है, मगर वह मृणाल जैसी नहीं मृणाल को पतिने घर से निकाला था "सुखदा" में सुखदा आर्थिक अभाव के कारण पतिकान्त को छोडकर वह खुद मि. लाल क्रान्तिकारी के पास जाती है, उसने छोडने के बाद आपत्ति में फंस जाती है। "त्यागपत्र" की मृणाल बच्चे को जन्म देती है मगर भूख के कारण बच्चा मर जाता है। "सुखदा" आर्थिक अभावके कारण बच्चा छोडकर दूसरे आदमी के साथ जाती है। "सुनीता" में सुनीता पति के साथ रहकर भी परपुरुष से सम्बन्ध रखती है। "कल्याणी" में पति की आर्थिकअभिलाषा के कारण कल्याणी जीवनभर अन्याय , अत्याचार सहती है, और एक बच्चे को जन्म देते वक्त दोनों ही नहीं बच सकते। यानी ये सभी समस्याएँ, आर्थिक हैं, सामाजिक, परिवारिक हैं। इन सबका

चित्रण जैनेन्द्रजीने किया है। आरंभिक और स्वातंत्र्योत्तर में विवर्त, व्यतीत में पारिवारिक और आर्थिक समस्याएँ हैं। विवर्त का जितेन क्रांतिकारी बनकर पंजाबी रेल गिराकर तिरसठ आदमी की मृत्यु और दोसौ पन्द्रह आदमी घायल कर देता है क्यों कि आर्थिक वैषम्य के कारण उसका विवाह भुवन मोहिनी के साथ नहीं होता, इसीके कारण यह कृत्य करता है। "तिन्नी" नामक "विवर्त" एक पात्र है, उसके पिता उसे वेश्या व्यवसाय में बेच डालता है। ये सभी आर्थिक समस्याएँ हैं, जिसका परिणाम परिवार पर होकर परिवार टूटने से उसका असर समाज पर हो गया है। "विवर्त" के मुताबिक व्यतीत में भी कुछ ऐसा हीसमस्या का चित्रण है।

"व्यतीत" का नायक जयन्त अपने प्रेयसी अनिता के साथ विवाह करना चाहता है लेकिन आर्थिक असमानता के कारण अनिता का विवाह पुरी साहब के साथ होता है, विवाह में असफलता मिलने से वह बहुत दुःखी रहता है, चन्द्रकलाके साथ उसका विवाह होकर भी वह अशान्त ही रहता है। फिर अनिता द्वारा आत्मसमर्पण न होने से दुःखी रहता है। यहाँ आर्थिक अभाव से विवाह में बाधा खडी हो गयी हैं। उसी प्रकार"व्यतीत" में कलुआ शराबी बनने की वजह से अपनी पुत्री "बुधिया" को वेश्या व्यवसाय के लिए प्रवृत्त करता है। "विर्वत" भी तिन्नी को बेच डाला है, व्यतीत में कलुआने "बुधिया" को पैसे के लिए वही किया है।

जैनेन्द्र के स्वातंत्र्योत्तर और आरंभिक में "जयवर्धन" अन्तिम उपन्यास है। इसमें "इला" जयवर्धन के साथ विवाह के पहले ही साथ रहती है, इसलिए संघर्ष खडा हुआ है। सुनीता, कल्याणी, त्यागपत्र, सुखादा, विवर्त, व्यतीत जैसी समस्याएँ जयवर्धन में नहीं है। "जयवर्धन" सामान्य-साधारण व्यक्ति नहीं है, राष्ट्र का अधिनायक है, "इला" उसकी विवाहित पत्नी नहीं, प्रेमिका है, किन्तु पत्नी के रूप में साथ रहती है। देशमें उनके इस सम्बन्धको लेकर पर्याप्त विद्रोह है,

जो स्वामी चिदानन्द एवं उसके दल के व्यक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्ति पाता रहता है। जय और इला दोनों विवाह के पक्षमें है, किन्तु इला के पिता, आचार्य अनुमति का अभाव, मार्ग की बाधा है। "जयवर्धन" ने जैनेन्द्रजी ने सामाजिक समस्या धर्म के रूढी परम्परा के कारण कैसी बनती है यह बतायी है, साथ ही साथ "जय" राष्ट्र के अधिनायक होने के कारण समस्या राजनीतिक बन गयी है। विरोधी दल जय के खिलाफ हंगामा कर रहे हैं। "जयवर्धन" में राजनीतिक समस्या के साथ श्रम को महत्व बताकर कुछ आर्थिक चिन्तन भी है। "जयवर्धन" की तरह संसार में आज भी उच्चपद पर रहनेवाले नेता के बारे में यही दिखायी देता है, उससे थोडी गलती हो गयी तो विरोधी दल का सभा त्याग करना, सत्ताधारी पार्टीपर दबाव लाना, उनको त्यागपत्र देने के लिए मजबुर करना वगैरा हमेशा चलता रहता है।

जैनेन्द्रजीने उनके आरंभिक उपन्यासोंमें जो समस्याएँ चित्रित की हैं उसमें पहले जो समस्याएँ अंशिक रूप में चित्रित हैं वे साठोत्तरी में विस्तारित रूपमें दिखाई देती हैं। जो समस्याएँ बिल्कुल नहीं। वे भी उन्होंने साठोत्तरी में चित्रित किए है, क्यों उस काल में ये समस्याएँ नहीं थी। या उस समय परिवर्तन में कठिनाई हो सकती थी। कुछ समस्याएँ आरंभिक उपन्यासोंमें चित्रित हैं वही साठोत्तरी में दिखाई देती हैं। और आरंभिक-साठोत्तरी में जो भी समस्याएँ हैं वे समस्याएँ आज भी जैसी की वैसी है। कहीं उसकी तीव्रता बढ भी गयी है जैसे उपन्यासोंमें कहीं बेकारी की समस्या रही होगी तो आज वह ज्वलंत सवाल बन गया है, ऐसे बहुत से समस्याएँ उनके साठोत्तरी उपन्यासोंमें चित्रित है।

जैनेन्द्र कुमार के साठोत्तरी उपन्यासोंमें मुक्तिबोध, अन्ततर, अनाम स्वामी और दशार्क ये चार उपन्यास आते हैं। जैनेन्द्रका "जयवर्धन" यह आरंभिक उपन्यासोंमें महत्वपूर्ण राजनीतिक उपन्यास रहा है। उसी प्रकार

साठोत्तरी उपन्यासों में "मुक्तिबोध" उपन्यास जयवर्धन की तरह है। इसमें जय और इला के विवाहपूर्व साथ रहने से समस्या खडी हो गयी क्योंकि जयवर्धन राष्ट्र का अधिनायक के रूपमें था। उसी प्रकार मुक्तिबोध का मि. सहाय राजनीतिज्ञ है उसकी पत्नीके अलावा प्रेयसी[नीलिमा] भी है। जैनेन्द्र के आरंभिक उपन्यासोंमें जो पारिवारिक समस्याएँ भी उसी प्रकार साठोत्तरी उपन्यासोंमें चित्रित हैं, कारण सिर्फ आर्थिक अतिरेक का है पति सहाय प्रेयसी नीलिमा के साथ सम्बन्ध रखते हैं, और पत्नी राजश्री महादेव ठाकुर के साथ सम्बन्धित है। सहाय के जामाता कुँवर साहब बडे पुर्जे व्यापारी हैं, और विदेशी से सम्बन्धित प्रेमिका है। कुँवर को तमारा ने घेर लिया है। ससुरने पचपन वर्ष की आयुमें पैंतीस वर्ष आयुके साथ प्रेयसी के रूपमें सम्बन्ध रखा तो जामाता कुछ नहीं बोल सकता, तो ससुर जमाता को विदेशी प्रेयसीसे सम्बन्ध रखने से कुछ नहीं बोल सकते। यह सब चित्रण पाश्चात्य प्रभाव के कारण ही दिखायी देता है, इसीसे परिवार टूटने की संभावना है। केवल समझौता करते हैं इसलिए ठीक है। पत्नी परिवार में प्रेयसी को अनिवार्य चाहती है। जैसे "मुक्तिबोध" में राजश्री नीलिमा को परिवार की हितैषिणी मानती है। वह पतिके साथ कहीं भी जानेसे दुःखी नहीं, बल्की प्रसन्न और खुश होती है। "अनंतर" में "प्रसाद" पत्नी के सिवा अपरा को सेविका के रूपमें रखते हैं। वे आबू पर जाते वक्त अपरा को ही लेकर जाते हैं। जामाता आदित्यभी विदेशी प्रेमिका से संबन्ध रखता है। वह कुशल उद्योग पति हैं। "मुक्तिबोध" बडे राजनीतिज्ञ सहाय और "अनंतर" का प्रसाद बडे आदमी है उनको लोग नेता मानते हैं। सहाय अच्छे उपदेशक तो प्रसाद से गवर्नर तक सलाह लेते हैं। वे दोनों उपन्यासों के नायक विरागी बनते हैं किन्तु व्यवहार में दुर्बल अनुरागी हैं। दोनों नैतिक और बौद्धिक दृष्टियोंसे दूसरों से सहायता की अपेक्षा रखते हैं। इन दोनों को अगर पत्नी, प्रेमिका और मित्र का सहारा न मिले तो इस कठोर धरती पर खडे नहीं

हो सकते हैं। ये दोनों केवल बात करने के लिए बने हैं, काम करने के लिए नहीं। देश में ऐसे व्यक्ति जो जो काम में अकार्यक्षम है, अप्रमाणि है, यह देशद्रोह है, वह राजनीतिक समस्या बन सकती है।

साठोत्तरी में जैनेन्द्र के उपन्यास में मुक्तिबोध "अनन्तर" में चित्रित पारिवारिक समस्या, आर्थिक अतिरेक का ही कारण है इसलिए साठोत्तरीमें आर्थिक अतिरेक से पारिवारिक समस्या निर्माण हो गयी है, उद्योगपति, व्यापारी इनके जमाता उच्चवर्ग के ही प्रतिक हैं। और वे नैतिकता से गिरे हुए हैं। ऐसे बहुत से लोग जो राजनीतिमें उच्च पदपर हैं, उनकी स्थिति ऐसी ही है, उनका परिवार, समाज या देशके प्रति प्यार नहीं है, पैसें के पीछे लगकर ज्यादा पैसे का उपयोग कोई गलत काम के लिए करते हैं। उनके लडकें भी लक्ष्यहीन हो गये हैं जैसे मुक्तिबोध में सहाय का पुत्र विरेश्वर और "अनन्तर" में प्रसाद्‌य का पुत्र प्रकाश है। समाज, देश के लिए ऐसी बातें अहितकारी हैं। अनामस्वामी और "दशार्क" में भी जैनेन्द्रने पारिवारीक, सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक समस्याएँ, आरंभिक उपन्यासोंमें जैसे चित्रित की हैं उस प्रकार बताने का प्रयास किया है। सिर्फ समय के अनुसार कारणों में परिवर्तन हि आ गया है। "अनामस्वामी" में त्यागपत्र का प्रमोद जो अनामस्वामी यानी "प्रबोध" का बचपन का सहपाठी है, वह अपने पुत्री की पुत्री उदिता को लेकर आश्रम में आये हैं क्यों कि उदिता विदेशमें जाकर एम्.ए. पढते वक्त माँ विधवा है घर से पैसे नहीं मिलते उस वक्त विदेश में उदिता एक साथ दो-दो आदमी से सम्बन्ध रहने से गर्भवती बन जाती है। इसीलिए आपत्ति में फंसी उदिता को लेकर सर.पी.दयाल [प्रमोद] अनामस्वामी के पास ले आये हैं। उदिता आर्थिक अभाव के कारण फंस गयी है, यानी आर्थिक समस्याके कारण पारिवारिक, सामाजिक समस्या बन गयी है। "अनामस्वामी" में शंकर उपाध्याय प्रेमकुंठित बनकर पत्नी, प्रेयसी की हत्या

करता है, आत्महत्या करनेका प्रयास करता है प्रेयसी का विवाह हुआ है, तो शंकर उपाध्याय उसके पति कुमार को भी समस्या में डालकर लंबी बीमारी से पीडित बन गया है। यहाँ प्रेमकुण्ठासे पीडित शंकर के द्वारा समाज पर आघात हुआ है। ऐसे प्रेमवीर आरंभिक उपन्यासोंमें भी जैनेन्द्रजीने पेश किये है, जैसे विवर्त का जितेन रेल गिरानावाला, "व्यतीत" का जयन्त जो विवाहित अनिता को बार में आत्मसमर्पण करने मजबूर कर देता है, "सुखदा" का लाल सुखदा को भी इसी चक्कर में लाता हैं। "सुनीता" में हरि प्रसन्न सुनीता के लिए ऐसा ही कुछ करता है। "त्यागपत्र" में मृणाल को कोयलेवाला कुछ समय के लिए अपने पास रखकर फिर छोड देता हैं। इस तरह जैनेन्द्रके आरंभिक और साठोत्तरी उपन्यासोंमें पारिवारिक समस्याओंमें कुछ साम्य है, और वे वर्तमान युग में भी स्पष्ट रूपसे दिखायी देती हैं, उसमें कुछ फर्क दिखायी नहीं देता। इसलिए अनामस्वामी में जैनेन्द्रजीके आश्रम की व्यवस्था का संकेत किया है।

आधुनिक युगमें ऐसे फंसे हुए लोगों में सुधार होकर वे सही रास्ते से चले। दुबारा इस आपत्ति में न फंसे या दूसरों के लिए चेतावनी देने का भी प्रयास किया है। जैनेन्द्र के आरंभिक उपन्यासोंमें "कल्याणी" में "भारतीय तपोभूमि" साठोत्तरी में "अनामस्वामी" में आश्रम, अंनतर में वन्या द्वारा शान्तिधाम "दशार्क" में स्वामी चिदानन्द का आश्रम आदि आश्रम की कल्पना जैनेन्द्रजीने आरंभिक उपन्यासों में आंशिक रूपमें बताने का प्रयास किया है लेकिन साठोत्तर उपन्यासोंमें विस्तारपूर्वक या विस्तृत रूपमें आया है।

जैनेन्द्रजीने आरंभिक में जैसे आर्थिक और राजनीतिक समस्याएँ अंशिक रूपमें बताये थें सुनिता, विवर्त में क्रान्तिकारी राजनीतिक बाते जैसे जयवर्धन और

"मुक्तिबोध" राजनीतिक उपन्यास रहे हैं उसीप्रकार आर्थिक समस्याएँ आरंभिक और साठोत्तरीमें भी हैं। लेकिन आर्थिक अभाव के कारण तिन्नी, मृणाल, सुखदा, अनिता, बुधिया की, जो स्थिति हो गयी थी उसमें महत्वपूर्ण तिन्नी और बुधिया है, उनके पिता उन्हें वेश्या व्यवसाय के लिए प्रवृत्त करते हैं। उसी प्रकार साठोत्तरी में जैनेन्द्र अन्तिम उपन्यास दशार्क में आर्थिक समस्या के कारण परिवार टूटता है इसलिए रंजना अर्थ प्राप्ति के लिए लोकरंजनका प्रयोग करती है, यानी एम.ए. एल् एल् बी "सरस्वति" रंजना कैसे बनती है ? क्यों बनती है ? कौन बनता है ? उसे अपराधी दोषी कौन और क्यों कहता है ? अपराधी कहनेवाले उस अपराध के जिम्मेदार हैं या नहीं ? आदि महत्वपूर्ण विषयोंपर जैनेन्द्रने "दशार्क" में प्रकाश डाला है।

"दशार्क" की नायिका रंजना का पति शेखर विश्व विद्यालय में लेक्चरर है अपनी पत्नी के पिता के मुताबिक अमीर बनने की धुन में जुआरी बनता है, उसमें हार कर, शराबी बनने से पत्नी उससे हटकर वेश्या बनती है। फिर कभी परिवार टूटेगा नहीं हमेशा सम्बन्ध भी रहेगा, और आर्थिक अभाव भी नहीं रहेगा सैसा पर्याप्त निकाल कर उस निर्णय पर आ जाती है। यानी रंजना वेश्या बनती है।

जैनेन्द्रजी ने "दशार्क" में जो आर्थिक समस्या बताने का प्रयास किया है, वह रेशमी मुलायम कपडे में बम बाँधकर समाज के सामने फेंक दिया है। इसका परिणाम क्या हो जायेगा यह देखना है। रंजना को चाहनेवाले सभी लोग आते हैं, जाते हैं, मगर उस नगर में रहनेवाला मिल मालिक मानेकलाल सेठ रंजना को पाँच लाख रुपये में खरीदना चाहता है इससे रंजनाने इन्कार करने से

हंगामा शुरु हो जाता है उसका चित्रण जैनेन्द्र ने बहुत मार्मिक किया है। नगर में बन्द, हडताल, आन्दोलन, शोर शराबा होता है, अखबारवाले, पत्रकार सब लोग इसमें आ गये हैं। रंजना के मकान का और रंजना की तस्वीर अखबार में आती है। देश के गृहमंन्त्री महोदय तक रंजना के पास आकर नगर छोडने के लिए मजबूर करते हैं। आर्थिक अभाव के कारण परिवार टूट गया है, और परिवार टूटने के बाद आर्थिक प्राप्ति की आवश्यकता के कारण रंजना वेश्या बन गयी है, और अमीर लोगोंने जिनके पास बहुत पैसा है, उन्होंने रंजना के साथ संघर्ष करना शुरु कर दिया है। "दशार्क" में रंजना की तरह उसके बिरादरीके मेहन्दीबाई, सकिना, मालती आदि नारियाँ हैं। वे भी परिवार आर्थिक अभाव से टूटने पर वेश्याएँ बन गयी हैं।

इन वेश्याओंपर समाज और सरकार दोनों अन्याय, अत्याचार करते हैं। मन्त्री के सचिव का सहायक इन वेश्याओंके पास आकर मुफ्त में लाभ उठाना चाहता है, विरोध करने पर उनको बूटोंसे मारकर घायल कर देता है, पुलिस भी वेश्याओंसे पैसे मांगकर उनको मारते हैं, गालियाँ देते हैं यह कहाँ का न्याय , इन्साफ है ? वेश्याओंको समाज और सरकार तकलीफ देते हैं, ऐसी बात नहीं, दादा लोग, दलाल, मकान मालिक सब परेशान करते हैं। इतना सब सहनेवाले उन वेश्याओंको फिर समाज, सरकार अपराधी कहते हैं। अपनी रूढ नैतिक दृष्टिसे समाज जिन्हें अपराधी ठहराता है सरकार की दृष्टिसे यह व्यवसाय कानून के खिलाफ है। "दुनिया में कौन है, जो बुरा होना चाहता है और कौन है, जो बुरा नहीं है, अच्छा ही है।" उन्हें ऐसा बना देने के लिए क्या समाज जिम्मेदार नहीं है ? समाज ने ही इन औरतों को वेश्या बना दिया है,

और वेश्या बनाकर रखा ही नहीं उनसे लाभ भी उठाते हैं और फिर उन्हीं के खिलाफ संघर्ष जैसे मानेकलाल सेठ रंजना के साथ कर रहा है।

जैनेन्द्र जीने आंशिक रूप में तिन्नी , बुधिया के लेकर आरंभिक उपन्यासोंमें बताया था, लेकिन साठोत्तरी में "दशार्क" के माध्यम से भाषा, शैली, शिल्प, कथा सब अलग लेकर आर्थिक और साथ ही साथ राजनीतिक समस्याएँ बताने का प्रयास किया है।

"दशार्क में माधवराव स्मगलर पारमिता क्रांतिकारी कालीचरण कुछ और ही, ये सब ऐसे क्यों बन गये हैं। समाजने ही इन्हें इस रास्तेपर लाया है। अमीर मानेकलाल सेठ जैसे पूंजीपति ने माधवराव को स्मगलर बनाया है। समाज में अर्थ के कारण वर्ग बनने से उसका परिणाम समाज पर होता है, जैसे मानेक सेठ द्वारा रंजना, माधव पर हुआ हैं।

यानी आरंभिक उपन्यासों और साठोत्तर उपन्यासोंमें कुछ समस्याओं में साम्य है, समय के अनुसार कुछ नयी समस्याएँ तैयार हो गयी हैं वे साठोत्तरी में हैं। राजनीतिक, आर्थिक समस्याओंका परिणाम आरंभिक उपन्यासोंमें आंशिक रूप में चित्रित है। आरंभिक और साठोत्तरी में पारिवारिक समस्या और सामाजिक समस्या समान ही है आर्थिक समस्या में बदल हो गया है। ये तमाम समस्याएँ इस वर्तमान युग में मौजूद है।

जैसे "अनन्तर" मुक्तिबोध, दशार्क में होटल की महिमा पाश्चात्य प्रभाव से दिखायी देती है। कलुआ, मानेकलाल सेठ, शेखर जैसे शराबी है, उसका असर समाज पर हुआ है। आज भी ऐसे शराबी आदमीयों की कमी नहीं हैं। जैनेन्द्र के उपन्यासों में रिवाल्वर वाले आ गये हैं, जैसे "सुनीता" में हरिप्रसन्न सामने अपना पिस्तौल अपनी कनपटी पर लगाता है, "सुखदा" में मि. लाल

अपरिचित सुखदा के सामने अपना पिस्तौल निकालता हैं। विवर्त में जितेन भी रिवाल्वर रखाता है। "जयवर्धन" में ट्रेन के एकान्त में जयवर्धन है भी रिवाल्वर तन जाता है। लेकिन ये रिवालवर का न सदुपयोग करते हैं, न दुरुपयोग। लेकिन आधुनिक युग यह रिवाल्वर का ही युग है। पहले सिर्फ फौज में ही बम, रिवाल्वर, इन्हींका प्रयोग करते थे। लेकिन आज टोली युध्द जो हम देखाते हैं, उनके पास जितना बम, बारूद, रिवाल्वर है, उतना फौजी के पास हैं, या नहीं यह सोचना पडेगा। देश के अहित चाहनेवाले आतंक लोग कहीं विस्फोट करके देश को धोका पहुँचाते है। आधुनिक युग में कौन कौनसी बातोंपर सोचना कठिन प्रश्न हो गया है, राजनीति या सरकार, सत्ताधारी पार्टी इन्हींको लेकर सोचा गया तो सब पैसों से ही चल रहा है। संसद के सदस्य को पैसों से खारीदा जाता है। इतने पैसे कहाँसे आते है, यह सोचनेपर स्मगलर लोग सोना, हिरा, चान्दी इन्हीं की चोरी करके पैसा जमा करते हैं ऐसे चीजें दूसरे देश भेजते हैं, विदेशसे यहाँ लाते है। जिससे ये अमीर बनकर फिर राज्य करने के लिए किसी पार्टी में आते हैं। तो लोगोंको खारीदना उन्हींको कठिन काम नहीं। यानी आज का राज्य चोरोंको, स्मगलरोंका ही राज्य है। ऐसा संदेह होता है। उसका परिणाम देश, राज्य, समाज और हर व्यक्ति पर होता है।

जैनेन्द्र के उपन्यासोंमें पारिवारिक, आर्थिक, समस्या के कारण चोर, स्मगलर रिवाल्वर वाले कैसे बनते हैं, यह बताने का प्रयास किया है। उसी प्रकार "नारी" इस समस्याँके कारण वेश्या बनती है, यह भी बताया है, जो आधुनिक युग में भी है। जैनेन्द्र के उपन्यासोंमें मृणाल, बुधिया, तिन्नी, रंजना मेहन्दीबाई,

सकिना, मालती की तरह आज भी बहुत से नारियाँ इस व्यवसाय में मग्न हैं, लोंगों का उनके पास , आना, जाना खुशियाँ लुटाना सब शुरु हैं, लेकिन इन्हें लोगों के बारे में, उन्हींके व्यवसाय के बारेमें उनका सुख, दुःख, उनकी समस्याएँ : इसके प्रति न समाज देखाता है न सरकार। हाँ, सरकार के लोग जनता के प्रतिनिधी उनके पास जाते हैं बातचीत करते हैं, मगर अपने निजी स्वार्थ के लिए। पुलिसों का भी काम है वेश्याओंके तरफ देखाना उनकी सुरक्षा करना वे परेशान है या नहीं, उनपर कौन अन्याय करता हैं या नहीं ? पुलिस लोग उनके पास जाते हैं बातचीत करते हैं लेकिन वह बातचित होती हैं, उन्हीं से पैसे माँगने की, अगर पैसे नहीं देते तो वे गन्दी गालियाँ देकर या समय पडनेपर उन्हें मारकर उनके सामान घर से बाहर निकालकर उन्हीं को डरा धमाकर पैसे लेते हैं और उस पैसे का वे सदुपयोग ही करते हैं। पुलिस लोग वेश्याओंके पास जाकर किसी चोर को पकडने के लिए सहायता की माँग करते हैं, इतने शक्तीशाली पुलिस रहते हैं, यह जैनेन्द्रजीने दशार्कमें बताया, रंजना के पास एक स्मगलर माधवराव आकर तीन हजार रंजना को देकर गया है, उसे पकडकर देने के लिए पुलिस रंजना को कहते हैं, साथ ही साथ तुमने चोर के पैसे क्यों लिए वह पैसे लेने का तुम्हें क्या अधिकार है ? यह कानून के खिलाफ है, ऐसे कहते है। वह पैसे हम ले सकते हैं, ऐसा कहकर पैसे माँगने का प्रयास करते हैं। रंजना पाप का पैसा लेती है वगैरा कहते है। आज आधुनिक युग में यह दृश्य दुर्लभ नहीं है। बहुत से महापुरुष इस महान कार्य में और सेवामें मग्न है। "दशार्क" जैनेन्द्रजीका १९८५ में लिखने के कारण आज की बहुतसी समस्याएँ उसमें चित्रित हैं , सिर्फ नौ, दस साल में कुछ समस्याओंमें फर्क नहीं हैं।

समस्याएँ वही हैं, वे कमी नहीं बल्की उन्हींकी तीव्रता बढ गयी, चारों तरफ हर जगह वही दिखाई देती हैं। समाज को ध्यान में लेकर समस्योओंको बारेमें सोचा तो धर्म, रिती, रिवाज, समाजके कानून, से समाज बिघडता जा रहा है, दहेज, तलाक जैसी समस्याएँ दिखाई देती हैं। "अनन्तर" की अपरा तलाक जीतकर आ गयी है। "दशार्क" में "बेला" के विवाह के लिए दहेज के रूप में तीन हजारकी आवश्यकता है। वह रंजना देती है। पैसे का अभाव और अतिरेक के कारण परिवार और विवाह टूटे हैं, या टूटने के रास्ते पर हैं। जैसे "सुनीता," त्यागपत्र, कल्याणी, सुखादा, विवर्त, व्यतीत, अनामस्वामी, मुक्तिबोध, अनंन्तर, दशार्क आदि।

"सुनीता" में हरिप्रसन्न के साथ सुनिता सम्बन्ध रखती है पति श्रीकान्त कुछ कहता नहीं इसलिऐ ठीक है आज भी ऐसे सुनिता, हरिप्रसन्न और श्रीकान्त बहुत है।

"त्यागपत्र" की मृणाल पहले प्रेयसी, पत्नी फिर देह को कोयलेवाले को बेचती है, फिर वेश्याओंकी बस्ती में मृत्यु। आज भी ऐसी कितनी औरतें मृणाल जैसे है, यह देखना कठिन हैं। "कल्याणी" में कल्याणी पर पैसे के लिए अन्याय करनेवाले उसके पति डा. असरानी हैं। इस घटना के कारण कल्याणी एक बच्चे को जन्म देते वक्त दोनों भी बच नहीं सके। ऐसे कल्याणी और डा. असराणी समाजमें बहुतसे देखने को मिलते हैं। सुखादा, विवर्त, व्यतीत में पैसे के अभाव के कारण प्रेमी मि. लाल, जितेन, जयन्त दुःखी होकर रहते हैं फिर उनको प्रेयसी पतिको छोडकर प्रेमी के पास आते हैं जैसे सुखादा पतिकान्त को छोडकर मि. लाल के पास आती है अनिता पति मि. पूरी को छोडकर जयन्त के पास आती हैं, "व्यतीत" में भुवनमोहिनी पति नरेशचन्द्र को छोडकर जितेन के पास आती है।

"विवर्त" अनामस्वामी में वसुंधरा कुमार को छोडकर शंकर उपाध्याय के पास जाती है। आज भी आधुनिक युग में मृणाल, सुनीता, सुखादा, अनिता, बधिया तिन्नी, रंजना, मेहन्दी, सकिना, मालती जैसे नारियाँ हैं! और श्रीकान्त नरेश, कान्त शेखर जैसे पति भी है।

जैनेन्द्रजीके आरंभिक उपन्यासोंमें तथा साठोत्तरी उपन्यासों में चित्रित समस्याएँ सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक समस्याओंमें विशेष फर्क नहीं हैं। सिर्फ समाज में परिवर्तन के लिए जिसकी आवश्यकता है उसीके अनुसार कथा, घटना, भाषा, शैली, शिल्प को अपनाया गया है। राजनीतिक की दृष्टि से जयवर्धन, मुक्तिबोध, दशार्क ये उपन्यास हैं, जयवर्धन, मुक्तिबोध में श्रम को महत्व दिया है, यानी गांधीवादी विचारोंको जैनेन्द्रजीने महत्व देकर स्पष्ट किया है।

"दशार्क" में आज के युग में जैसे बन्द, हडताल, आन्दोलन, घेराव, मोर्चा, चलता है, उसका चित्रण है। साथ ही अखबारवाले "राई का पर्वत" कैसे बनते हैं सही क्या झूट क्या है, यह बिना मालूम करते ही अखबार में छपाने के कारण समाज में उसका कैसा हंगामा मचता है, यह भी बताया हैं। साथ ही पूँजीवाद का असर समाज पर कैसा होता है, निम्न वर्ग के लोगों-पर अत्याचार कैसे किया जाता है, यह प्रस्तुत किया है।

जैनेन्द्रजीने इस आधुनिक युग में आधुनिकता, अतिभौतिकवाद, राजनीति और पाश्चात्य अन्धानुकरण के कारण आदमी किस तरह फँसते हैं। समस्याएँ खुद ही तैयार करके उसमें चक्कर काटता है, और दुःखी बनता है। इसलिए जैनेन्द्रजीने आरंभिक तथा साठोत्तरी में आश्रम, शान्तिधाम,

भारतीय तपोभूमि वगैरा नामसे अध्यात्मिक और मौलिक विचार बताने का प्रयास जारी रखा है, जिस के कारण पैसों का विकेन्द्रीकरण हो जाय, साथ ही साथ धर्म, जाँति-पाँति छोडकर लोग एक दूसरे से नफरत, घृणा के सिवा प्यार, मोहब्बत, सहानुभुति एक दूसरे के प्रति निर्माण होने की आवश्यकता बतायी है, क्यों, कि भौतिकवाद में सिर्फ पैसों को लेकर भौतिक सुख के पीछे भागने से सुखी नहीं होता । पैसा सिर्फ जीवन जीने का साधन है, उससे जीवन साध्य नहीं होता । कुछ बुरे धन्दे से भी पैसा प्राप्त होता है, लेकिन उस पैसे के माध्यम से बुरे कृत्य भी हो सकते हैं, उससे समाज में नैतिकता नहीं रहती, उस व्यक्ति का स्थान भी गिर जाता है, साथ ही साथ वह पैसे से सुखी भी नहीं होता । पैसा मनुष्य के परिवार को बिगाडता है, अतिरेक पैसा देश, समाज, मनुष्य को हानिकारक है । साथ ही पैसे से दुःख ही होता है, खुशी, आनन्द नहीं । पैसे से हम सब कुछ खरीद सकते हैं, मगर लाभ कुछ नहीं हो सकता जैसे - पैसे से पुस्तके खरीद सकते हैं, मस्तिष्क नहीं, पैसे से पलंग खरीद सकते है, नींद नही, पैसे से दवा खरीद सकते हैं, स्वास्थ नहीं, पैसे से शृंगार खरीद सकते हैं, सौंदर्य नहीं । यानी हर जगह पैसा कामयाब नहीं हो सकता, उसकी हार हो जाती है, इसलिए पैसे से सुख नहीं मिलता, बल्कि नींद हराम हो जाती है, इसलिए सही और सम्यक रास्ता जैनेन्द्रजी ने आश्रम या आध्यात्मिक मार्ग बताया है, जिसके कारण देश में, [समृद्धि, नैतिकता, सभ्यता,] समाज में, [एकता में] एकता आ जाएगी । सवाल निर्माण ही नहीं होंगे, तो उस पर सोचने की आवश्यकता ही नहीं ।

इस तरह जैनेन्द्रजीने अपने आरंभिक उपन्यासों और साठोत्तरी उपन्यासों में चित्रित समस्याएँ आज भी है, इसलिए समाज परिवर्तन की अपेक्षा रखते हुए, गांधीवादी, आध्यात्मिक विचार बताने का प्रयास किया है ।

निष्कर्ष :-

जैनेन्द्र - साहित्य मानव-जीवन और व्यक्ति की समस्याओं का भण्डार है। जैनेन्द्र का संपूर्ण साहित्य व्यक्ति की व्यथा से अपूर्ण है। व्यक्ति की आत्मा में झाँककर उस में उस के आत्मस्था सत्यों का उद्घाटन तथा अर्न्तद्वन्द्व बहिर्द्वन्द्व से उत्पन्न विषाम परिस्थितियों को चित्रित करना ही उन्हें श्रेयस्कर रहा है।

जैनेन्द्र की दृष्टि में व्यक्ति ही वह आधार है, जिसपर समस्त जीवन की भीत्ति आरूढ है। जो समष्टि में है, वही व्यष्टि में है। अत: एवं जैनेन्द्र के साहित्य मे व्यष्टि द्वारा समष्टि की अर्थात समस्त मानव जाति के सान्निध्य की प्राप्ति का प्रयास दृष्टिगत होता है।

जैनेन्द्र के साहित्य में शोषक, शोषित, श्रम, पूँजी, मशीन, उद्योग तथा विभिन्न राजनीतिक वादों के सन्दर्भ में व्यक्ति जीवन का ही विवेचना की है। व्यक्ति अकेला जीवित नहीं रह सकता। उसके लिए सामाजिक राजनीतिक आदि व्यवस्थाओं का होना आवश्यक है। व्यक्ति, समाज, राज, राष्ट्र, और विश्व से ऊपर "मानव" है। अत: एव जैनेन्द्रके साहित्य में राष्ट्रवाद, समाजवाद, साम्यवाद आदि के मूल में " मानव-नीति का ही प्राधान्य है।

इसलिए जैनेन्द्र के साहित्य में मानव जीवन की विविध समस्याओं पर विचार किया गया है।